सचित्र विज्ञान कोश

आज के युग मे हमारे जीवन मे कदम-कदम पर विज्ञान की उपलब्धिया देखने को मिलती हैं। सुबह उठने से लेकर शाम को सोने के समय तक हम जो भी कार्य करते हैं, उसमे विज्ञान का बहुत ही महत्व-पूर्ण स्थान है। समय की जानकारी के लिए घड़ी जैसी छोटी सी चीज भी कितनी आवश्यक है। सूर्य घडी, चन्द्र घडी, पानी की घड़ी इत्यादि रूप बदलते-बदलते यह हाथ घडी तथा दीवार घडी का रूप धारण कर गई। ग्राहमबैल ने टेलीफोन जैसे अद्भुत यत्र का निर्माण किया जिसकी मदद से सभी दूरिया समाप्त हो गईं। इसी प्रकार ओरविल ने सबसे पहला विमान आकाश मे उडाया। राइट बन्धुओ ने हवाई जहाज बनाया। जेम्सवाट ने रेलगाडी का इजिन बनाया। सर्वप्रथम निकोलस जोसेफ क्यूनो ने मोटर-ठेले का निर्माण किया जिसका परिष्कृत रूप बाद मे मोटर-कार मे बदला। इसी प्रकार जलयान का निर्माण हुआ।

विज्ञान की अनेको खोजो मे एटम इतना महत्व-पूर्ण है जिस शक्ति का प्रयोग अनेको कारखानो, चिकित्सालयो, खेती उत्पादन आदि मे होता है। डाल्टन ने इस पर सर्वप्रथम खोज की। सूर्य-ऊर्जा का उपयोग जीवन मे कितना अधिक है, इसका सही ज्ञान तब होगा, जब पृथ्वी पर अन्य सभी प्रकार के ईंधन व ऊर्जा स्रोत समाप्त हो जाएगे। ग्रीस मे थैलीज नामक गणितज्ञ ने चुम्बक की खोज की जो बिजली का इतिहास थी। समुद्र, सितारो, चन्द्रमा, सूर्य, पृथ्वी व अन्य ग्रहो की खोजें हुई। पृथ्वी पर भूकम्प कैसे आते हैं तथा ज्वालामुखी कैसे फूटते हैं यह सभी हम विज्ञान के माध्यम से ही जान पाए हैं।

सचित्र विज्ञान कोश

3

विशाल शर्मा

पल्लव प्रकाशन दिल्ली

(एटम—पुर्जे—बिजली)

मूल्य : 50 रुपया मात्र
प्रकाशन वर्ष : 1989
संस्करण : प्रथम
प्रकाशक : पल्लव प्रकाशन, नई सड़क मालीवाड़ा, दिल्ली।
मुद्रक : शर्मा फाईन आर्टस, दिल्ली।

विषय-क्रम

धार्मिक, प्रौढ़ोपयोगी

एवं

सुरूचिपूर्ण
बाल-साहित्य

के

शीर्षस्थ प्रकाशक

रसायनिक तत्वों की खोज

विश्व के पदार्थ—संसार में मिलने वाले सब पदार्थ दो प्रकार के हैं, ठोस और तरल। ठोस पदार्थों में पाषाण मिट्टी, लोहा, तांबा, पीतल, रांगा इत्यादि आते तरल पदार्थों में पानी, तेल इत्यादि हैं। इनमें से कुछ, कुछ विशेष परिस्थितियों में तरल से ठोस और ठोस से तरल हो जाते हैं। जैसे धातुएं गर्मी से पिघलकर तरल रूप धारण कर लेती है। पानी के तीन रूप होते हैं, तरल पानी, जमकर बरफ और गर्मी पाकर उड़ने वाली भाप। इन्हें ठण्डा या गरम करने पर इनके रूप में परिवर्तन हो जाता है।

इन दो प्रकार के पदार्थों के अतिरिक्त कुछ गैसें हैं, जिनका भाप के समान न कोई आकार होता है न कोई आकृति। किसी बोतल में पानी या कोई तेल भरा जाए तो उसका एक निश्चित तल होगा परन्तु गैस या भाप का कोई तल न होगा। बोतल में जरा-सी गैस या भाप छोड़ने पर वह पूरी बोतल को भर देगी।

ऊर्जा—ऊर्जा वह शक्ति है जो वस्तुओं का रूप परिवर्तित करती है। किसी भी ठोस को तरल और तरल को गैस बना देने की शक्ति ताप-ऊर्जा में है। विद्युत ऊर्जा प्रकाश उत्पन्न कर सकती है। मोटरों को संचालित कर कल कारखाने चला सकती है। तारों द्वारा ध्वनि को दूर ले जा सकती है। ताप ऊर्जा से उत्पन्न भाप में इतनी शक्ति है कि वह कल कारखानों तथा रेलों को चलाती है। कोयला, तेल इत्यादि में भी ऐसी ही ऊर्जा है। जो विविध कार्यों में प्रयुक्त होती है।

ऊर्जा शक्ति विविध वस्तुओं को गति प्रदान करती है और वह गति यंत्रों को संचालित कर उपयोगी वस्तुओं के निर्माण में सहायक होती है। इसे यांत्रिक ऊर्जा कहते हैं। इस ऊर्जा का नियंत्रित उपयोग लाभदायक है। विश्व के जितने भी गतिशील यंत्र हम देखते हैं वे सब ऊर्जा द्वारा ही संचालित होते हैं। सब मशीनें इसी से चलती हैं और मानव उपयोग की विविध वस्तुएं बनाती हैं। कपड़ा, स्टील, कागज, चीनी, तेल, सीमेंट इत्यादि उपयोगी वस्तुओं के कारखाने ऊर्जा से ही चलते हैं।

ऊर्जा के अनियंत्रित होने पर यह विनाशकारक

दृश्य प्रस्तुत करती है। उदाहरणस्वरूप यदि तूफान, भूस्खलन, ज्वालामुखी, भूकम्प, बाढ इत्यादि को लें तो ये सब अनियंत्रित ऊर्जा शक्ति के विनाशकारी दृश्य उपस्थित करने वाले है।

रसायनिक तत्व—परमाणु के विषय में चर्चा लगभग २००० वर्ष पुरानी है; इसकी वस्तुस्थिति का ज्ञान भले ही उस समय न हो, परन्तु इसकी कल्पना अवश्य की जा चुकी थी। यूनानी दार्शनिकों के दो मत थे। एक मत था जो पदार्थ जैसे दिखते हैं, वैसे ही हैं, परन्तु दूसरा मत था कि हर ठोस चीज कुछ छोटे-छोटे कणों की बनी है। उनका यहां तक भी अनुमान था कि ये कण इतने छोटे हैं कि इन्हें देख पाना भी सम्भव नहीं है। वे कहते थे कि यदि एक ठोस चीज को बराबर तोडते चले जाए तो एक स्थिति वह उत्पन्न होगी कि जब छोटे-से-छोटे कण को तोड़ा ही न जा सके। उस अंतिम कण का नामकरण उन्होंने परमाणु किया।

यूनानी दार्शनिकों ने यह अन्दाज तो लगा लिया, परन्तु इसे प्रमाणित करने की दिशा में कोई परीक्षण न किया। उनके पास इस प्रकार के परीक्षण करने के साधन भी उपलब्ध नहीं और न ही उन्होंने इस दिशा

में कोई ध्यान हो दिया। फिर भी उनका यह अनुमान अवश्य था कि ये परमाणु गतिशील हैं और निरन्तर चक्कर लगाते रहते हैं।

लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व अंग्रेज अध्यापक डाल्टन ने परमाणु पर विचार किया। वह मौसम का सूक्ष्म निरोक्षण किया करता था। उसने सोचा कि आक्सीजन और नाइट्रोजन जैसी गैसें परस्पर रसायनिक ढंग से कैसे मिल सकती हैं। इससे परमाणु के विषय में चिन्तन और परीक्षण को गति मिली। वैज्ञानिकों के परोक्षणों ने यह सिद्ध कर दिया था कि बहुत-सी वस्तुएं पीसने या गर्म करने पर भिन्न-भिन्न तत्वों में बंट जाती है। जैसे कुछ चीजों को गर्म और गर्म करते जाने पर अन्त में कोयला रह जाता है। इससे स्पष्ट है कि उसका मूल तत्व कार्बन है। पानी के तत्व देखने के लिए उसमें दो तार डाल कर यदि उन्हें बैटरी से जोड़ दिया जाए तो एक के सिरे पर ऑक्सीजन के बुलबुले बनेंगे और दूसरे के सिरे पर हाइड्रोजन के। अर्थात पानी इन दो गैसों का मिश्रण है। इन गैसों के और आगे विभाजन भी सम्भव नहीं है।

वैज्ञानिकों ने तत्वों की खोज करने में अथक परि-

श्रम किया है। इनमें से चांदी, सोना, रांगा, कार्बन इत्यादि से तो लोग बहुत पहले से परिचित थे, परन्तु यह न जानते थे कि ये तत्व हैं। हर ठोस या तरल चीज जो हम देखते हैं तत्व नहीं हैं। उनमें कई-कई तत्वों का मिश्रण होता है। वैज्ञानिक इन तत्वों को स्वतंत्र करके परीक्षण करना चाहते हैं। इन तत्वों में कुछ तो बहुत ही दुर्लभ हैं, जो बहुत कम चीजों में मिलते हैं। पृथ्वी, समुद्र और वायु में ३० तत्व प्रमुख हैं। इनका निर्माण उनसे या उनके समासों से हुआ है। नीचे हम उन तत्वों की सूची प्रस्तुत कर रहे हैं।

१. कार्बन	काला या चमकीला ठोस पदार्थ (कोयला, हीरा)
२. तांबा	लाल रंग की नरम धातु।
३. सोना	पीले रंग की भारी और नरम धातु।
४. लोहा	धूसर रंग की भारी सख्त धातु।
५. पारा	रुपहली भारी द्रव धातु।
६. चांदी	सफेद भारी धातु।
७. ऐल्यूमिनियम	रुपहली हलकी धातु।
८. मैगनेशियम	सफेद हलकी धातु।

९. कैल्शियम	चमकीली हलकी धातु
१०. सोडियम	रूपहली हलको धातु।
११. जस्ता	नीली सफेद धातु।
१२. बंग	रूपहली सफेद धातु।
१३. गंधक	पीला हलका स्फटिक।
१४. टिटैनियम	सफेद चमकीली धातु।
१५. सिलिकोन	धूसर रंग का स्फटिक।
१६. फासफोरस	सफेद मोम जैसा ठोस पदार्थ
१७. निकल	सफेद कठोर धातु।
१८. मैंगेनीज	सफेद धूसर धातु।
१९. पोटाशियम	रूपहली नरम हलकी धातु।
२०. लिथियम	सफेद हलकी नरम धातु।
२१. सीसा	नीली धूसर भारी नरम धातु।
२२. कोबाल्ट	धूसर भुरभुरी धातु।
२३. बेरियम	चमकीली नरम धातु
२४. ब्रोमीन	भूरा भारी द्रव।
२५. आयोडीन	जामनी स्फटिक।
२६. क्लोरीन	हरे पीले रंग की गैस
२७. फ्लोरीन	हलकी पीली गैस।
२८. हाइड्रोजन	हलकी अदृश्य गैस।
२९. नाइट्रोजन	हलकी अदृश्य गैस।
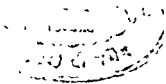
३०. ऑक्सीजन हलकी अदृश्य गैस।

ये सभी रसायनिक तत्व समासों में मिलते हैं, इसलिए इनमें से बहुत कम को आपने पृथक-पृथक देखा होगा। इनके मिले रूपों को आप लोग नित्य ही अपने प्रयोग में लाते हो। जैसे नमक का प्रयोग आप नित्य अपने भोजन में करते हैं, जो सोडियम और क्लोरीन गैस का समास है।

ऑक्सीजन—ऑक्सीजन तत्व पृथ्वी पर सबसे अधिक मात्रा में मिलता है। यह हवा, पानी, चट्टान और खनिजों में भी पाया जाता है। पृथ्वी की मिट्टी ऑक्सीजन, सिलिकोन और एल्यूमिनियम से मिलकर बनी है। ऑक्सीजन और हाइड्रोजन गैसें पानी बनाती हैं। रेत में आक्सीजन और सिलिकोन मिले होते हैं। ऑक्सीजन वह गैस है जिससे हम सांस लेते ह। इसके बिना जीवन रह नहीं सकता। डाल्ट ने यही ज्ञात करने का प्रयास किया था कि किस वस्तु में कितने तत्वों का समास है और किस-किस मात्रा में। जब तक इन समासों में निश्चित मात्रा का मिश्रण न होगा तब तक नई वस्तु का निश्चित रूप सामने नहीं आएगा। वैज्ञानिक इसे प्रकृति का नियम मानकर संतुष्ट न हुए। उन्होंने सामान्य नियमों की खोज की,

जो सब चीजों पर समान रूप से लागू हो सके। वैज्ञानिक सिद्धान्त काल्पनिक विचार नहीं होते। इनके सिद्धान्तों के पीछे ठोस तत्व होते हैं जिनको अनेकों बार परीक्षण करके निर्धारित किया जाता है।

परमाणु की धारणा से प्रत्येक चीज की रूपरेखा को स्पष्ट ढंग से समझा जा सकता है। इसी से हमें ज्ञात होता है कि विश्व की सभी वस्तुएं अणु व परमाणुओं से ही बनी हैं। जिस प्रकार लाखों शब्दों से किसी भाषा का निर्माण होता है उसी भांति प्रत्येक वस्तु लाखों-करोड़ों अणुओं से बनती है।

परमाणु की वास्तविकता

डाल्टन ने विचार प्रस्तुत किया कि रसायनिक तत्व परमाणुओं द्वारा निर्मित हैं। हर तत्व के परमाणु एक-दूसरे से भिन्न प्रकार के हैं इनका भार भी प्रथक-प्रथक हैं। जब दो तत्व परस्पर मिलते हैं तो उनके निश्चित संख्या के परमाणु परस्पर मिलकर अणु (मौलीक्यूल) बनाते हैं। उनके भार में कोई परिवर्तन नहीं होता। इस मिश्रण के समय यदि दो तत्वों की आवश्यक अनुपात से कम-अधिक मात्रा होगी तो एक तत्व का कुछ भाग अमिश्रित रह जाएगा। हाइड्रोजन और आक्सीजन को १-८ के अनुपात में मिलाने पर पानी बनता है। यदि इनमें से कोई गैस अधिक होगी तो वह समास में स्थान न पाकर प्रथक रह जाएगी। किसी वस्तु के अणुओं में परमाणुओं का मिश्रण इसी अनुपात में रहता है। जब वैज्ञानिक इन्हें प्रथक-प्रथक करते हैं तो ये इसी अनुपात में प्राप्त होते हैं।

उक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि संसा
की सब वस्तुएं परमाणुओं और अणुओं से बनी हैं।
डाल्टन अपने जीवन-काल में केवल बीस रसायनि
तत्वों का ज्ञान प्राप्त कर पाया था। उसके पश्चा
वैज्ञानिकों ने इनकी संख्या में ७५ तक वृद्धि की
रसायन वेत्ताओं ने इन परमाणु के भार निर्धारि
किए हैं। इनमें हाइड्रोजन का परमाणु सबसे हलक
है। कुछ रसायनिक तत्वों के परमाणुओं का भा
निम्नांकित है।

रसायनिक-तत्व	प्रतीक	परमाणु-भा
१. हाइड्रोजन	(हा)	१.००
२. हीलियम	(ही)	४.००
३. लिथियम	(लि)	६.६४
४. बैरीलियम	(बै)	९.०१
५. बोरोन	(बो)	१०.८
६. कार्बन	(क)	१२.०१
७. नाइट्रोजन	(ना)	१४.०१
८. आक्सीजन	(आ)	१६.००
९. फ्लोरीन	(फ्लो)	१९.००
१०. नियोन	(नि)	२०.१८
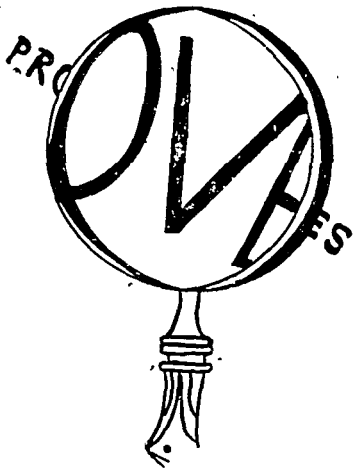
११. सोडियम	(सो)	२३.००
१२. मैग्नेशियम	(मै)	२३.३२

उक्त संख्याएं अनुपात निर्धारित करने के लिए बताई गई हैं। इनमें एक-एक का वजन इतने औंस या पौण्ड नहीं है। एक पोंड हाइड्रोजन में दस करोड़ शंख से भी अधिक परमाणु होते है। वैज्ञानिक इस दिशा में कार्य कर रहे हैं। परमाणुओं के वास्तविक आकार के विषय में अभी उन्हें कोई निश्चित ज्ञान नहीं है।

अणु-परमाणु की परतें—विज्ञान वेत्ताओं ने अपने परीक्षण इस दिशा में संचालित किए कि कोई भी पदार्थ अणुओं से किस प्रकार बना। उनका खयाल है कि परमाणु और अणु किसी निश्चित नियम के आधार पर एक-दूसरे से चिपटकर किसी पदार्थ की सतह बनाते हैं। उनकी किसी खास दिशा में पंक्तियां बनी हैं। ये पंक्तियां एक-दूसरी से एक इंच के दस करोड़वें भाग से भी अधिक निकट होती हैं। यह क्रमबद्धता 'स्फटिक' कही जाती है। ग्रेफाइट के स्फटिक में कार्बन को परमाणु षटकोण के आधार के एक तह के रूप में मिलते हैं। इसी प्रकार नमक के स्फटिक में सोडियम और क्लोरीन के परमाणू होते हैं।

परमाणुओं में गति—ये परमाणु शांत नहीं रहते। इनमें गति होती है और जब स्फटिक को गर्म किया जाता है तो परमाणुओं की गति और बढ़ जाती है और एक निश्चित तापमान पर परमाणु एक दूसरे से प्रथक होने लगते हैं। जब वह स्फटिक पिघल कर द्रव बन जाता है तो परमाणु इधर-उधर बहने के लिए मुक्त हो जाते है। द्रव के अणु परस्पर टकराते हैं। द्रव टकराने में कुछ अणुओं की गति अन्यों से तीव्र हो जाती है। यदि तीव्र गति वाला अणु द्रव की ऊपरी सतह पर आ जाए तो वह कूद कर बाहर भी निकल भागता है। ये अणु भाप या गैस का रूप धारण कर लेते हैं।

टेढ़ा मेढ़ा रास्ता—ये वाष्प के अणु द्रव से बाहर निकलकर आगे बढ़ते हैं तो उन्हें वायु के अणुओं से टक्कर लेनी पड़ती है। इस टकराव से उनका मार्ग बदल जाता है। उन्हें जिधर भी रास्ता मिलता है वे उधर को ही दौड़ने लगते हैं। वायु के अणु वायु-मण्डल में भरे रहते हैं। वाष्प के अणुओं को उन्हें चीरकर अपना रास्ता बनाना होता है। पहले वैज्ञानिक इन अणुओं का मात्र अनुमान ही लगाते थे, परन्तु अब इनकी गिनती करना और इनके आकार को

मापना तोलना भी सम्भव हो गया है। फिर भी इसे पूर्ण रूपेण सही नहीं कह सकते क्योंकि अभी किसी एक परमाणु या अणु को देखा नहीं जा सका है। कुछ एक्सरे प्रयोग अवश्य हुए हैं और इलेक्ट्रोन 'सूक्ष्मवीक्षण यंत्र' द्वारा कुछ धुंधले से चित्र भी लिए गए हैं। आंखों से दिखाई न देने पर भी ये अणु परमाणु ऐसे संकेत देते हैं। जिनसे उनके भार और आकार का ज्ञान प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होती।

अणुओं और परमाणुओं को विषय में विज्ञान वेत्ताओं के परीक्षण आश्चर्यजनक परिणाम प्रस्तुत करते हैं। ये इतने सूक्ष्म होते हैं कि यदि ऑक्सीजन के ८ करोड़ परमाणुओं को पंक्तिबद्ध किया जाए तो पंक्ति की लम्बाई शायद ही एक इंच हो। हवा में उड़ते हुए अणु एक दूसरे अणुओं से एक सेकिंड में पचास करोड़ बार टकराता है। इससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि इनकी चाल कितनी टेढ़ी-मेढ़ी होनी सम्भव है। अणुओं की यह टक्कर कठोर पदार्थों की टक्कर नहीं होती। यह टक्कर मात्र इतनी ही होती है वे एक दूसरे के निकट आकर एक दूसरे को विद्युत-[illegible] से दूर धकेल देते हैं। इस धक्का-मुक्की में [illegible] नष्ट नहीं [illegible]।
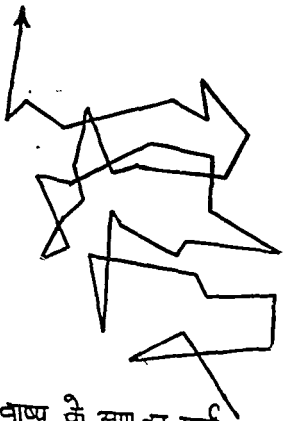
वाष्प के अणु का मार्ग

ये सब बातें जो हमने ऊपर अणु, और परमाणुओं के विषय में बतलाईं, परीक्षणों द्वारा सिद्ध की जा चुकी हैं। गत पचास वर्षों में वैज्ञानिक अपनी खोजों में और भी आगे बढ़ चुके हैं और उन्होंने अणु परमाणुओं की पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर ली है तथा उसके प्रयोग भी किए हैं।

अणु व परमाणु की दुनिया में विस्मयकारी घटनाएं घटती हैं और वह इतनी रोमांचकारी होती हैं कि कहानी-सी प्रतीत होती हैं। समय-समय पर जो परीक्षण वैज्ञानिकों ने किये हैं उनसे इस बात की पुष्टि हो जाती है कि इसमें कुछ भी असत्य नहीं है। इससे भावी विज्ञान का मार्ग भी प्रशस्त हुआ है।

बिजली की खोज

बिजली—सूखे बालों में कंघा करने पर चटचट की आवाज आती है। यदि कमरे में पूर्ण अंधकार हो तो कुछ चिंगारियां भी देखी जा सकती हैं। इसी प्रकार ऊनी कपड़े पर किसी चीज को रगड़ा जाए तो उसमें अन्य छोटे-छोटे तिनकों को अपनी ओर खींचने की शक्ति आ जाती है। वैज्ञानिकों ने इस खींचने की शक्ति को बिजली (इलेक्ट्रिसिटी) कहा।

इसके पश्चात वैज्ञानिकों ने कुछ नए परीक्षण किए। जिनके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि बिजली में केवल किसी वस्तु को अपनी ओर खींचने की ही शक्ति नहीं है वरन् दूर धकेलने की भी है। अमरीकी वैज्ञानिक बेंजामिन फ्रेंकलिन ने इन दोनों प्रकार के प्रभावों को धन विद्युत (पोजिटिव) तथा ऋण विद्युत (नेगेटिव) नाम दिया। ये वस्तुओं के अपने-अपने प्रभाव हैं, जैसे शीशे को रगड़ने से धन विद्युत

का प्रसार होता है और प्लास्टिक के रगड़ने से ऋण विद्युत का। इन परीक्षणों से इस नतीजे पर पहुंचा गया कि एक ही प्रकार के प्रभार एक दूसरे को दूर धकेलते हैं और विरोधी प्रभार एक दूसरे को अपनी ओर खींचते हैं। इससे वैज्ञानिकों ने एक ठोस सिद्धान्त बना लिया और दोनों प्रकार की विद्युत का प्रयोग आरम्भ हुआ।

बिजली का प्रयोग—इसके पश्चात बहुत से वैज्ञानिक इस खोज में जुट गए कि विद्युत को उपयोगी कैसे बनाया जाए। उन्होंने सोचा कि यदि इस शक्ति को नियंत्रित करके तारों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सके तो यह बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इससे मोटरें चल सकती हैं टेलीफोन की आवाज एक जगह से दूसरी जगह जा सकती है, रेडियो टेलिविजन चल सकते हैं। बिजली का यह परीक्षण यहां से आरम्भ हुआ था जब किसी ने बालों में कंघा करते समय चटर-पटर अनुभव की थी और ऊनी कपड़े के रगड़ने पर उसको और रुओं का आकर्षण अनुभव किया गया था। प्राचीन काल में यूनान के लोगों का इस ओर ध्यान आकर्षण अनुभव किया गया था। प्राचीनकाल में यूनान के लोगों का

इस ओर ध्यान अम्बर के टुकड़े की समूर या ऊनी कपड़े पर रगड़ने पर गया था। उसके पश्चात कई शताब्दियों तक इस दिशा में किसी ने विचार नहीं किया। इसके पश्चात वैज्ञानिकों ने जब इस दिशा में परीक्षण आरम्भ किए तो महत्वपूर्ण तथ्यों की खोज की।

बिजली और परमाणुओं का सम्बन्ध—विज्ञान-वेत्ताओं ने लगभग १०० वर्ष पूर्व बिजली और परमाणुओं के विषय में काफी जानकारी प्राप्त कर ली थी परन्तु उन्हें यह ज्ञान नहीं था कि इनका परस्पर क्या सम्बन्ध है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने परमाणुओं को उनके सामान्य मार्ग से अलग ले जाने की पद्धति खोजी।

सभी लोग देखते हैं कि आकाश में बादलों के अन्दर बिजली चमकती है। वह बिजली चमक कर एक बादल से दूसरे बादल की ओर भाग रही है। इसका परीक्षण स्वनिर्मित बिजली पर करने के लिए वैज्ञानिकों ने किसी चीज में ऊंचे वोल्टेज की बिजली भर कर देखी तो उसके अन्दर से चिंगारियां निकलकर हवा में होती हुई दूर तक जाने लगी।

उन दिनों तक वैज्ञानिकों ने किसी नली से हवा

बाहर निकालने की प्रणाली ईजाद कर ली।
उन्होंने बिजली की चिंगारी को हवा निकली न
में प्रविष्ट किया तो देखा कि उसका रूप काफी
बदल गया। अब उस चिंगारी में चटक नहीं
और वह एक प्रकाश में बदल गई थी। वह न
प्रकाश से भर गई और उसका प्रकाश चारों ओ
फैलने लगा। वैज्ञानिकों ने नली की वायु के स्थ
पर उसमें नियोन गैस या पारे की वाष्प को प्रवि
किया तो वह बिजली के प्रभाव को एक ओर से दूस
ओर ले जाने से सफल हुई। प्रकाश की यह चम
उन किरणों से निकलती है जो ऋण प्लेटों से आ
हैं। एक वैज्ञानिक ने नली के अन्दर एक पंखा लगा
देखा तो वह घूमने लगा। इससे सिद्ध हुआ कि
किरणें कणों की धाराएं हैं।

इसके पश्चात वैज्ञानिकों ने उस नली के पा
चुम्बक ले जाकर देखा तो वे किरणें झुक गईं। इस
सिद्ध हुआ कि उन किरणों में बिजली का प्रभाव
और वे मात्र प्रकाश की किरणें नहीं हैं। प्रकाश की
किरणें चुम्बक से मुड़ती नहीं। तुम टार्च से रोशनी
फेंककर उनके निकट चुम्बक ले जाओगे तो प्रकाश की
किरणें मुड़ेंगी नहीं। इस परीक्षण ने वैज्ञानिकों को

यह सोचने पर बाध्य किया कि आखिर ये प्रभारयुक्त किरणों के कण क्या चीज हैं। उन्होंने सोचा कि सम्भवतः उनका सम्बन्ध परमाणुओं से है।

इस दिशा में इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक जोसफ जॉन टॉमसन ने सिद्ध किया कि उन किरणों को चुम्बक के ही समान बिजली की शक्ति से भी झुकाया जा सकता है। उसने इन विस्मयजनक किरणों के कणों के परीक्षण की दिशा में कुछ नए प्रयोग किए। उसके प्रयोगों ने यह सिद्ध किया कि जिन कणो से वे किरणें निर्मित है वे सब एक ही प्रकार के हैं। वे सब कण उसके परीक्षणों में नली के एक ही भाग से जाकर टकराते थे। यदि वे प्रथक प्रकार के होते तो एक ही जगह न टकराते और नली में फैल जाते। इन कणों के भार में भी उसे कोई अन्तर न मिला। इन कणों को वैज्ञानिकों ने 'इलैक्ट्रोन' नाम से पुकारा।

वैज्ञानिकों ने इलैक्ट्रोन का भार जांचा तो वह हलके-से-हलके हाइड्रोजन परमाणु के हजारवें भाग से भी कम था। टॉमसन इससे अधिक कुछ न कर पाया परन्तु बाद में वैज्ञानिकों ने जो परीक्षण किए उन्होंने 'इलैक्ट्रोन' की इस धारणा को सही साबित किया। वैज्ञानिकों ने 'इलैक्ट्रोन' के प्रभार को नापा। वह

इतना कम था कि वैज्ञानिकों को उसे प्रभार मानने में संदेह होने लगा। परन्तु वह संदेह शीघ्र ही समाप्त हो गया और वैज्ञानिक अपने प्रयोगों में आगे बढ़े। उन्होंने विद्युत और परमाणु में सम्बन्ध स्थापित किया। आज आप अपने मकानों में प्रकाश के लिए बल्ब जलाते हैं। जो बिजली की धारा इन बल्बों को जलाती है वह तांबे के तारों के बीच से गुजरती इलैक्ट्रोन की धारा है जो उनके समूह से बनती है। आपको आश्चर्य होगा कि इलैक्ट्रोन इतने सूक्ष्म होते हैं कि आपकी बत्ती को एक सेकिण्ड जलाने मे तीन संख इलैक्ट्रोन बल्ब की तारों के अन्दर आते जाते हैं। है ना यह आश्चर्यजनक बात ?

इलैक्ट्रोन परमाणु के अंग—प्रकाश प्रसाधन के पश्चात वैज्ञानिकों ने इलैक्ट्रोन के अन्य प्रयोग किए। उन्होंने इलैक्ट्रोन का प्रयोग अन्य वस्तुओं से सम्पर्क स्थापित करके किया। इलैक्ट्रोनों को या तो अधिक ताप से अधिक तीव्र कणों के प्रहार से छिटकाया जा सकता है। प्रकाश की तरंगों का झटका खाकर वे धातु के टुकड़े से उछल भागते हैं। वे परमाणुओं से बहुत छोटे होते हैं। वैज्ञानिक अब इन्हें परमाणु के ही अंग स्वीकार करते हैं।

वैज्ञानिकों ने अपने प्रयोगों से यह सिद्ध कर दिया कि परमाणुओं को भी विभक्त किया जा सकता है। इसका मतलब यह हुआ कि परमाणु भी कुछ इलेक्ट्रोन जैसे छोटे तत्वों से मिलकर बने हैं। सम्भव है परमाणु के कुछ अंग और प्रकार के भी हों। इलेक्ट्रोनों का सम्बन्ध ऋण विजली से है। बहुत मुमकिन है कि परमाणु में धन बिजली भी हो, जो ऋण बिजली को संतुलित रखता हो।

परमाणुओं का एक अंग इलेक्ट्रोन है। इसके अन्य कण किसी अलग प्रकार के भी होंगे। इनमें ऋण बिजली तथा धन बिजली दोनों ही हैं। अन्ततः इसी बात की बाद में अनेक वैज्ञानिकों ने पुष्टि भी की।

परमाणु टूट सकते हैं ?

अलफा, बीटा, गामा किरणें पियरे क्यूरे
मेरी क्यूरी ने कई रसायनिक तत्वों की खोज
इनमें से एक रेडियम था जो यूरेनियम से
गुना सक्रिय है । नए परीक्षणों से कई रेडियो
तत्व प्रकाश में आए । रेडियो सक्रिय का सम्ब
तत्वों से है जिनके परमाणुओं से कुछ खास
निकलती रहती हैं ।

सन् १८४८ में आस्ट्रेलिया के अर्नेस्ट रद
ने इन किरणों की आंशिक खोज की । इनकी प्र
किरणें भी अधिक दूर नहीं जातीं । इन्हें सा
कागज से रोका जा सकता था । रदर फोर्ड ने
'अल्फा' नाम से पुकारा । दूसरी किरणों में ऊ
कम थी परन्तु वे 'अल्फा' किरणों की अपेक्षा
गुनी दूर जा सकती थीं । इन्हें उसने 'बीटा
दिया ।

U-235
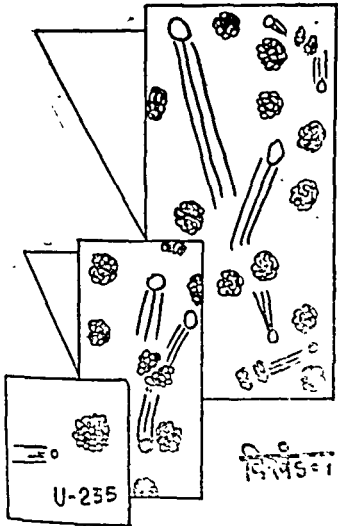
इसके पश्चात तीसरी किरणों का पता चला, जो पहली दोनों किरणों से अधिक पारगामी थीं। ये पत्थर के भी आर पार जा सकती थीं। इन्हें 'गामा' नाम से पुकारा गया। ये तीनों अक्षर यूनानी भाषा के प्रथम तीन अक्षर हैं। रदर फोर्ड ने सफलतापूर्वक इन रेडियो सक्रिय तत्वों से निकलने वाली किरणों के गुण-धर्मों की खोज की। इनमें से अलफा और बीटा किरणों को चुम्बक या विजली से झुकाई जा सकती हैं, परन्तु गामा किरणों को नहीं झुकाया जा सकता। इससे स्पष्ट हुआ कि गामा किरणें इलैक्ट्रोन की किरणें न होकर प्रकाश की किरणें थीं। ये किरणें एक्स-रेज के समान थी, परन्तु उनसे भी अधिक पारगामी इनका प्रयोग कॅसर की बीमारी में किया जाता है।

अलफा और बीटा किरणों के परीक्षण से ज्ञात हुआ कि अलफा किरणें धन विद्युत के प्रभार से युक्त हैं। वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया की बीटा किरणें इलैक्ट्रोन की किरणें हैं जो रेडियो सक्रिय परमाणुओं में से निकलती हैं। अलफा किरणें चुम्बक से झुकती अवश्य है, परन्तु बहुत कम। इससे स्पष्ट है कि ये इलैक्ट्रोनों से भारी हैं। अल ...म का ऐसा परमाणु था, जिसमें । उसमें

दो घन विद्युत के प्रभार रखते हैं। परमाणु में घन और ऋण दोनों प्रभार रखते हैं।

परमाणुओं में ऊर्जा—रेडियो तथा अन्य तत्वों के परमाणु इलेक्ट्रोनों तथा अलफा कणों को निरन्तर अपने से बाहर उछालते रहते हैं। इससे वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि इनमें अपार ऊर्जा विद्यमान है। इस अनुमान के पश्चात वैज्ञानिक परमाणु ऊर्जा की खोज कि दिशा में अग्रसर हुए। अब उन्होंने यह सोचना आरम्भ किया कि परमाणुओं में अलफा और बीटा कणों के अलावा और क्या कुछ भरा हुआ है। इस खोज के दौरान उन्हें दो अन्य प्रकार के कणों का ज्ञान हुआ। इनमें से एक प्रोटोन था। जिस प्रकार अलफा कण में दो इलेक्ट्रोन कम थे। वैसे ही इसमें एक इलेक्ट्रोन कम था दूसरा कण जिसकी खोज की गई वह न्यूट्रोन था, जिसका भार तो प्रोटोन के बराबर था, परन्तु इसमें किसी प्रकार का बिजली प्रभार नहीं था। इन खोजों से यह भी पता चला कि अलफा दो प्रोटोनों या न्यूट्रोनों का समूह था।

रदर फोर्ड ने एक ऐसा यंत्र बनाया जो अलफा के कणों की गिनती कर सके। इस यंत्र की सहायता से उसे यह पता चला कि रेडियो-सक्रिय पदार्थ का

टुकड़ा किस प्रकार टूट कर बिखरता है। यह टूट-फूट कर लुप्त नहीं होता, परन्तु एक अन्य रासायनिक तत्व में बदला जाता है। यह रासायनिक तत्व भी टूटता है और नए परमाणुओं में बदल जाता है। यह प्रक्रिया चलती रहती है। रदर फोर्ड ने वे परीक्षण कई रेडियो सक्रिय पदार्थों के विषय में किए। इनसे अलफा और बीटा कणों के परिवर्तनों का ज्ञान प्राप्त हुआ।

'फ्लैश काण्टर' यंत्र से पता चला कि रेडियो सक्रिय तत्व एक विशेष ढंग से टूटते हैं। यह टूटने की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है, परन्तु समय के साथ-साथ यह टूटने की गति कम होती जाती है। ऐसा उन तत्वों में कमी हो जाने के कारण होता है।

रेडियो सक्रिय पदार्थों में से गामा किरणों के रूप में ऊर्जा बाहर निकलती है। अलफा तथा बीटा कणों के रूप में गतिक ऊर्जा बाहर आती है। एक औंस रेडियम से उतनी ऊर्जा प्राप्त होती है जितनी २८० मन कोयला जलाने से भी शायद प्राप्त न हो सके। यही है परमाणु की ऊर्जा जिसका पता चले पचास वर्ष से अधिक नहीं हुए हैं। इस ऊर्जा के [illegible]ोग की कठिनाई यह है कि रेडियम और

रेडियो-सक्रिय पदार्थ बहुत कम मात्रा में उपलब्ध हैं। ये दुर्लभ वस्तुएं हैं, इसीलिए इस ऊर्जा को व्यावहारिक उपयोग में लाना कठिन है। वैज्ञानिक इनकी निरंतर खोज में लगे हैं और इनके विकल्पों की खोज कर रहे हैं।

परमाणु में रिक्त स्थान—रदर फोर्ड ने एक छल्ले में सोने का महीपत्तर लगाकर उसके बीच से अलफा किरणों को गुजारा तो उनमें से कुछ तो सीधे आर-पार निकल गए, कुछ थोड़ा बहुत तिरछे पड़ गए और कुछ वापस लौट आए। इसका उसने स्पष्ट अर्थ लगाया कि परमाणु कोई ठोस वस्तु नहीं है। उनके इर्द-गिर्द ऐसा खुला स्थान है जहां से तीव्रगामी कण बिना रुकावट आर-पार जा सकते हैं। इधर-उधर मुड़ने वाले कणों के विषय में उसने सोचा कि शायद वे परमाणुओं से टकराकर नहीं लौटते, वरन् बिजली की शक्ति से दिशा परिवर्तन कर देते हैं।

अलफा कण में धन विद्युत का प्रभार होता है। अब यदि यह माना जाए कि परमाणु के केन्द्र में भी धन-विद्युत का प्रभार है तो बात सरल हो जाती है। हमने ऊपर बताया था कि दो धन-विद्युत प्रभार एक दूसरे को दूर धकेलते हैं। जो अलफा कण परमाणु

केन्द्र से हटकर गुजरते हैं उनकी चाल तिरछी हो जाती है और जो केन्द्र से टकराते हैं वे वापस लौट आते हैं। जो केन्द्र से काफी दूरी से निकलते हैं वे सीधे निकले चले जाते हैं।

परमाणु का यह केन्द्रीय अंश एक इंच के लगभग दस लाख करोड़वें भाग के बराबर होता है। इसे नाभिक (न्यूक्लियस) कहते हैं। इसी में अल्फा कण टकराकर वापस लौटता है, शेष स्थान से सीधा या तिरछा होकर निकल भागता है।

परमाणु एक इंच का लगभग दस करोड़वां भाग चौड़ा होता है और इसका नाभिक इसकी अपेक्षा में एक लाख गुना छोटा। नाभिक के धन प्रभार को संतुलित रखने के लिए ऋण इलेक्ट्रोन उसमें समुचित मात्रा में होते हैं। रदरफोर्ड के अनुमान के अनुसार ये इलैक्ट्रोन नाभिक के चारों ओर उसी प्रकार चक्कर लगाते हैं जैसे पृथ्वी और ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। नाभिक की धन शक्ति इलेक्ट्रोनों को बांधकर रखती हैं, दूर नहीं भागने देती। इलैक्ट्रोन नाभिक को अन्य परमाणुओं से टकराने नहीं देते, उसकी सुरक्षा करते हैं।

उक्त स्पष्टीकरण से परमाणु की रूपरेखा का एक

चित्र आंखों के सामने आ जाता है । परमाणु के बीच से भार युक्त फंसा हुआ नाभिक है । नाभिक के चारों ओर घूमने वाले इलैक्ट्रोन परमाणु की सीमा निर्धारित करते हैं । परन्तु सब ही परमाणु एक जैसे नहीं होते । वैसे हर परमाणु, चाहे वह किसी भी रसायनिक तत्व का क्यों न हो, बना इसी प्रकार का होता है । प्रथक-प्रथक तत्व के परमाणु में प्रोटोनों, न्यूट्रोनों और इलैक्ट्रोनों की संख्या समान नही होती । उनमें पर्याप्त अन्तर होता है ।

परमाणु का आकार—हाइड्रोजन सबसे हलका तत्व है । इसके परमाणु के नाभिक में केवल एक प्रोटोन होता है और इसके बाहर केवल एक इलैक्ट्रोन । हीलियम का परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु से चार गुना भारी होता है । इसका नाभिक भी हाइड्रोजन के नाभिक से चार गुना होता है, परन्तु इलैक्ट्रोन कम होते हैं । इसके नाभिक के दो प्रोटोन और दो न्यूट्रोन होते है ।

लिथियम के नाभिक में तीन प्रोटोन और चार न्यूट्रोन होते हैं । लिथियम हीलियम से भारी तत्व है, इसलिए इसके परमाणु का भार भी अधिक है । इसमें तीन बाहरी इलैक्ट्रोन होते हैं । जिन आधारों पर

वैज्ञानिकों ने उक्त परमाणुओं की रूपरेखा तैयार की है, उन्हीं आधारों को लेकर अन्य रसायनिक तत्वों के परमाणुओं की रूपरेखाएं भी तैयार की जा चुकी हैं। इनमें सबसे बड़ा और भारी परमाणु यूरेनियम का है। इसके नाभिक में ९२ प्रोटोन, १४६ न्यूट्रोन और ९२ इलैक्ट्रोन होते हैं। इसके इलैक्ट्रोन नाभिक के चारों ओर बहुत तेजी से चक्कर लगाते रहते हैं और वे परमाणुओं से अपने नाभिक की रक्षा करते रहते हैं।

उक्त आधारों पर भौतिक शास्त्रियों ने इन परमाणुओं के मानचित्र बनाने में सफलता प्राप्त की है। प्रोटोन, न्यूट्रोन और इलैक्ट्रोनों के स्पष्ट हो जाने से भौतिक शास्त्रियों को परमाणु के अध्ययन में काफी सरलता हो गई है। अब उन्हें विविध रसायनिक तत्वों का प्रथक-प्रथक विश्लेपण करने की आवश्यकता नहीं रहीं।
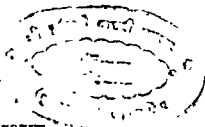
मथन परीक्षण

टामसन ने अपने पहले परीक्षणों में इलैक्ट्रोनों को एक और तुरन्त पाया था। इससे उसने इनके विषय में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया। अब टॉमसन ने नियोन गैस के परमाणुओं का ठीक भार ज्ञात करने के लिए परीक्षण किया। नए यंत्र से उसे ज्ञात हुआ कि नियोन गैस के परमाणु दो प्रकार के हैं, जिनके भार २० और २२ है। हमें जो नियान गैस मिलती है, उसमें दोनों प्रकार के परमाणुओं का मिश्रण है। साधारणतः उनमें कोई भेद प्रतीत नहीं होगा, टॉमसन के यंत्र ने उन्हें प्रथक-प्रथक करके देखने में सफलता प्राप्त की।

टॉमसन ने सोचा सम्भवत. अन्य रसायनिक तत्वों के भी इसी प्रकार मिश्रित भार-युक्त परमाणु हों। उसने अन्य तत्वों के परीक्षण की दिशा में सोचा ही था कि तभी प्रथम विश्व युद्ध छिड़ गया। इन परी-

क्षणों को फिर पांच वर्ष पश्चात आरम्भ किया गया। इसका परीक्षण नए यंत्र पर करने से पता चला कि कुछ अन्य रसायनिक तत्वों के भी प्रथक-प्रथक भार वाले परमाणु मौजूद हैं। ये परीक्षण आगे ही आगे बढ़ते गए। उनसे ज्ञात हुआ कि वर्तमान ज्ञात तत्वों में से तीन चौथाई तत्व ऐसे हैं जिनमें २ से १० तक प्रथक-प्रथक भार युक्त परमाणु मिलते हैं। इन्हें 'आइसोटोप' कहते हैं। ऐसे एक हजार से भी अधिक आइसोटोपों का ज्ञान अब तक प्राप्त हो चुका है।

यह ज्ञान प्राप्त होने पर रसायन शास्त्रियों के लिए एक समस्या खड़ी हो गई। पहले उनके सामने केवल ९० प्रकार के परमाणु थे और अब उनके सामने एक हजार से भी अधिक परमाणु आ गए। आइसोटोपों की खोज ने उनका काम कुछ जटिल बना दिया। एक रसायनिक तत्वों के इलैक्ट्रोनों की संख्या समान होने पर भी उनके नाभिकों में अन्तर आ गया। उनमें प्रोटोनों की संख्या तो वही रही, न्यूट्रोनों की संख्या बढ़ गई। एक तत्व के परमाणुओं में इलैक्ट्रोनों की संख्या समान होती है। यदि इनकी संख्या में अन्तर हो तो समझना चाहिए कि वे परमाणु प्रथक-प्रथक रसायनिक तत्वों के हैं। जैसे नियोन के परमाणु को

ल तो इनका बाहरी खोल समान होगा और उसमें १० इलैक्ट्रान होंगे। इसके नाभिक में प्रोटोनों का भार होता है। नाभिक में १० न्यूट्रोन होते हैं। जहां नाभिक का प्रभार २२ हो वहां न्यूट्रोन १० के स्थान पर १२ होते हैं।

हाइड्रोजन का परमाणु सबसे सादा होता है। यह भी तीन रूपों में मिलता है। इसके तीन आइसोटोप हैं। साधारणतः इसके नाभिक में एक प्रोटोन और बाहर एक इलैक्ट्रोन होता है जो नाभिक का चक्कर काटता है। इसके आइसोटोप में नाभिक में एक प्रोटोन और न्युट्रोन होता है। यह परमाणु दुगने भार का होता है। अभी एक तिगुने भार का आइसोटोप मिला है। यह आइसोटोप रेडियो-सक्रिय है, अन्यों की भांति स्थिर नहीं।

भारी पानी—आपने भारी पानी का नाम सुना होगा जो एटेमिक परीक्षणों में काम आता है। पानी का अणु हाइड्रोजन दो परमाणुओं और आक्सीजन के एक परमाणु के मेल से बनता है। साधारण पानी में कहीं-कहीं एक अणु ऐसा मिला होता है। पानी के ऐसे अणुओं को एक जगह एकत्र कर लिया जाए तो वह भारी पानी होगा।

परमाणु का विभाजन

रदरफोर्ड ने अपनी प्रयोगशाला में परमाणु सम्बन्धी जो परीक्षण किए उनके द्वारा परमाणु के बाहरी आकार और उसकी बनावट के तलों के विषय में अब पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो चुकी थी और उसका काल्पनिक मानचित्र भी बना लिया गया था। उसके विभिन्न भागों का ज्ञान प्राप्त हो चुका था। उसके प्रकार, आकार, परिधि तथा गति का पता चल चुका था।

अब वह इस दिशा में सोच रहा था कि किस प्रकार एक तरह के परमाणु को दूसरी तरह का बनाया जा सके। रेडिया-सक्रियता के रूप में तो युगों-युगों से ऐसा होता आ रहा था। रेडियम के परमाणुओं के बदलते रूपों का उसने पता चलाया था, परन्तु यह मात्र प्राकृतिक प्रक्रिया थी, वैज्ञानिक प्रक्रिया नहीं। वह सोचता था कि यदि प्रकृति में यह सम्भव है तो वैज्ञानिक ऐसा क्यों नहीं कर सकता?

रदरफोर्ड ने अब इस दिशा में कार्य आरम्भ कर दिया। उसने एक शीशे की नली में रेडियो पदार्थ रखा और चमक-गणक को उससे इतनी दूर रखा जहां तक अलफा कण न पहुंच सकें। फिर उसने शीशे की नली में एक के बाद एक, कई गैसें डालीं। जब उस नली मे नाइट्रोजन गैस डाली गई तो चमक-गणक में चमक आ गई। चमक-गणक को नली से एक फुट दूर ले जाने तक उसमें वह चमक बनी रही। इससे रदरफोर्ड ने अनुमान लगाया कि शीशे की नली से कुछ कण बाहर निकलकर भाग रहे थे, वे अलफा कणों से पांच-छः गुना दूर जाने में सूक्षम थे। इस परीक्षण से उस वैज्ञानिक ने अनुमान लगाया कि वे कण अलफा के न होकर प्रोटोन-कण के थे। हुआ यह कि नाइट्रोजन का अलफा-कण परमाणु के नाभिक मे जाकर टकराया और उसी में चिपक गया। इससे नाभिक में एक उथल-पुथल मची और उसमे एक प्रोटोन बाहर निकला। प्रोटोन के बाहर निकलने पर जो शेष रहा वह ऑक्सीजन का आइसोटोप था।

मेघ-प्रकोष्ठ का प्रयोग—इस परीक्षण के पश्चात अन्य वैज्ञानिकों ने मेघ-प्रकोष्ठ के उपयोग द्वारा कुछ अन्य बातें खोज निकाली। मेघ-प्रकोष्ठ-यंत्र द्वारा

अलफा कणों को छिटकाकर नाभिक और प्रोटोनों की स्थिति देखी जा सकती है। तीव्रगामी परमाणु-कण जिस ओर जाते हैं, एक रेखा-सी बना देते हैं। इस रेखा से पता चल जाता है कि वे किस प्रकार के कणों से बनी हैं। इससे उन कणों की गति का भी ज्ञान हो जाता है। यह प्रयोग करना भी सरल नहीं है। तीन लाख प्रायासों में एक आध बार ही अलफा कण परमाणु के नाभिक से टकराता है।

वैज्ञानिक प्रयोग—अलफा कण के नाभिक पर चोट करने से जब प्रोटोन बाहर निकलता वैज्ञानिकों ने देख लिया तो उन्होंने सोचा कि वे ऐसी तीव्रगामी गोली तैयार करें जो अलफा के समान परमाणु के नाभिक पर चोट करके प्रोटोन को भी बाहर निकालें। इसके लिए रदर फोर्ड की प्रयोगशाला के दो वैज्ञानिकों ने एक बिजली की मशीन बनाकर उसकी एक नली से हाइड्रोजन के परमाणुओं को तेजी से बाहर निकाला। ये प्रति सेकिंड तीन हजार मील की चाल से बाहर निकलकर अन्य तत्वों के परमाणुओं से टकराए तो उनके नाभिकों में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई दिया। यही परमाणुओं को तोड़ने की प्रक्रिया थी, जो २५ वर्ष पूर्व हुई।

प्रोटोन

साइक्लोट्रोन का प्रयोग—वैज्ञानिकों ने उसके पश्चात परमाणुओं के कणों को और अधिक ऊर्जा देने के प्रयास आरम्भ किए। तीव्रगामी परमाणु कणों को उन्होंने गोलियों के रूप में प्रयोग कर नाभिकों पर आक्रमण आरम्भ किए। इस कार्य के लिए कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने 'साइक्लोट्रोन, यंत्र, बनाया। पहले यंत्रों में प्रोटोनों को नली में गुजारा जाता था। इसमें उन्हें तेजी से गोल चक्कर में घुमाया गया। इस प्रयोग में प्रोटोन नाभिक से निकलकर भी गोल चक्कर में घूमते रहते थे: इस यंत्र में एक मुड़ा हुआ चुम्बक लगा होता है, जो नाभिक-कणों को एक निर्धारित भाग पर ही घुमाता है। इस यंत्र में प्रोटोनों को कुछ ही हजार वोल्ट से धक्का देने पर इतनी ऊर्जा मिल जाती है जितनी ३५ करोड़ वोल्ट बिजली से प्राप्त होती है।

कोस्मोट्रोन का प्रयोग—फिर इस कार्य के लिए कोस्मोट्रोन यंत्र की ईजाद की गई जो न्यूयार्क नगर के निकट ब्रुकहेवन की 'परमाणु अनुसंधान प्रयोगशाला' में लगी है। इसके चुम्बक-घेरे का व्यास ७५ फुट है। वैज्ञानिकों को 'एक्स-किरणों' से सुरक्षा से बचाने के लिए इसके चारों ओर कंक्रीट की दीवार बनी है।

जब परमाणु कणों को तेजी से घुमाया जाता है तो उनसे घातक एक्स-रेज निकलती हैं। इसमें कुछ प्रोटोन या न्यूट्रोनों को छोड़कर उनके मार्ग पर धकेल दिया जाता है। ये एक सेकिंड में उस घेरे के ४० लाख चक्कर लगाते हैं। इसका मतलब वे एक सेकिंड में चन्द्रमा की दूरी से भी अधिक यात्रा तै कर लेते हैं और उनमें २.५ अरब वोल्ट ऊर्जा भर जाता है। तब उन्हें लक्ष्य पर वार करने को छोड़ा जाता हैं। अब वहां 'ऑल्टरनेटिंग ग्रेडिपेण्ट सोन्क्रोटोन' मशीन तैयार की गई है, जिसकी लम्बाई ७०० फुट है और जो प्रोटोनों को ५५ अरब वोल्ट ऊर्जा प्रदान कर सकेगी। आज रदरफोर्ड जीवित नही है, जिन्होंने इस परीक्षण के लिए तख्तों और टिन की सहायता से अपनी मशीन बनाई थी।

मेसोन—अधिक ऊर्जा उत्पन्न होने पर 'मेसोन' तत्व उत्पन्न होते हैं। सर्वप्रथम ये तत्व कास्मिक किरणों में मिले थे। ये किरणें बाहरी व्योम से पृथ्वी पर आती है। ब्रुकहेवन की मशीन 'मेसोन' कण उत्पन्न करने में सफल हुई, इसलिए उसकी मशीन का नाम 'कोस्मोट्रोन' रखा गया था। इन कणों के विषय में वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त कर रहे है।

बीटा ट्रोन—परमाणुओं को तोड़ने वाली इन मशीनों का प्रयोग इलैक्ट्रोनों को तीव्रगति देने के लिए भी किया जाता है। जब तेज गति से जाते इलैक्ट्रोन (बीटा किरण) किसी धातु से टकराती हैं तो तीव्रगति एक्स-रेज निकलती हैं। इन प्रयोगों में लगी एक मशीन का नाम 'बीटाट्रोन' है। इससे निकली किरणें एक गज मोटी स्पात की दीवार के भी पार जा सकती हैं। इन मशीनों का कैंसर की बीमारी में भी उपयोग किया जाता है। ये एक्स-रेज से अधिक शक्तिशाली होती हैं।

नाभिक का आकार

हम पीछे बतला चुके हैं कि नाभिक प्रोटोनों और न्यूट्रोनों से मिलकर बनता है। केवल हाइड्रोजन का परमाणु ऐसा होता है जिसके नाभिक में केवल एक प्रोटोन होता है, न्यूट्रोन नहीं होता। प्रोटोन और न्यूट्रोन से बने नाभिक की एक इंच के लाखवें भाग को करोड़वीं लम्बाई भी नहीं होती।

वैज्ञानिकों ने नाभिक की और गहराई से जांच-पड़ताल आरम्भ की और यह रहस्य जानना चाहा कि नाभिक के अन्दर प्रोटोन और न्यूट्रोन किस प्रकार परस्पर चिपके हुए हैं। सिद्धान्त रूप से प्रोटोनों को एक-दूसरे को दूर धकेलना चाहिए क्योंकि उनमें धन विद्युत का प्रभार होता है। फिर भी वे एक जगह रहकर नाभिक का निर्माण करते हैं। इसका स्पष्ट अर्थ है कि वहां कोई अन्य ऐसी शक्ति अवश्य है जो इन्हें जोड़कर रखने में समर्थ है। इस शक्ति का अभी

ठीक से अनुमान नहीं लगाया जा सका। अनुमानित विचार यही है कि दो प्रोटोनों के बीच एक न्यूट्रोन आकर उन्हें जोड़ने का काम करता है।

नाभिक का अनुमानित आकार—इसे ऊंचाई पर बना एक गढ़ा समझना चाहिए, ठीक वैसा ही जैसा ज्वालामुखी का मुख होता है। उस गढ़े में प्रोटोन होते हैं। जब उस गढ़े में कोई अन्य परमाणु-कक्ष भेजा जाता है तो वह गढ़े में प्रोटोनों को हिला देता है। इससे कभी-कभी आने वाला कण इतने जोर से आता है कि वह पहले पड़े कण को बाहर निकाल देता है। इस प्रकार प्रोटोन या न्यूट्रोन छिटकता है। इस टकराने और छिटकने से गामा किरणें निकलती हैं।

परमाणुओं को तोड़ने वाली मशीनों ने नाभिक में होने वाले परिवर्तनों का परीक्षण करके हजारों उपाय खोजे है। वैज्ञानिकों ने नए परमाणु बनाने की भी खोज की है और उन्हें उसमें सफलता मिली है, परन्तु ये परमाणु अपरिमित मात्रा में तैयार करने में समय लगेगा।

आइसोटोपों का भार—कुछ वैज्ञानिकों ने आइसोटोपों के भार को मापने की दिशा मे परीक्षण किए हैं। इनकी माप से जो परिणाम निकले हैं उनके

आधार पर कहा जा सकता है कि आइसोटोपों और परमाणुओं के भार में दस लाखवें अंश का अन्तर हैं।

नाभिक के भार में अन्तर—जब नाभिक पर तीव्रगामी कणों से प्रहार किया जाता है तो उसके भार में अन्तर आ जाता है। अर्थात् उसका भार प्रहार करने के पूर्व के भार से कम या अधिक हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि उस नाभिक में या तो प्रहार करने वाले कण के वहीं ठहर जाने से भार बढ जाता है या किसी प्रोटोन के छिटक जाने से भार कम रह जाता है। इस परिवर्तन के विषय में ५० वर्ष पूर्व अलबर्ट आइन्सटीन ने संकेत दिया था, परन्तु परीक्षण द्वारा उस समय उसे प्रमाणित नहीं किया गया था।

सापेक्षता का सिद्धान्त—जब आइन्सटीन ने उक्त घोषणा की थी उस समय उसकी आयु २६ वर्ष की थी। वह स्थान और काल की अपनी उन मान्यताओं पर विचार कर रहा था जिनके आधार पर उसने सापेक्षता-सिद्धान्त प्रस्तुत किया। उसने यह सिद्ध किया कि किसी भी वस्तु का भार सर्वदा एक जैसा नहीं रहता, प्रायः कम या अधिक होता रहता है। उसका भार इस बात पर निर्भर है कि वह कितनी तेजी से घूमती है। आइन्सटीन की यह धारणा इस

सिद्धान्त को चुनौती थी कि किसी वस्तु का भार हर दशा में समान रहता है। आइन्सटीन ने सिद्ध किया कि जो वस्तु जितनी तीव्रगति से घूमती है, उसका भार उतना ही अधिक होता है। साधारण चाल में यह अन्तर इतना कम होता है कि इसे नापना कठिन है। परन्तु जब कोई वस्तु प्रकाश गति से घूमती है उसके भार को मापना कठिन नहीं होता। परमाणु के कण इतने ही वेग से घूमते हैं कि उन पर आइन्सटीन का सिद्धान्त पूरी तरह लागू होता है। प्रकाश और इलैक्ट्रोन की चालों में १०० और ९९ का अन्तर इसी कारण आ जाता है। गति करते समय इलैक्ट्रोन का भार छै गुना अधिक हो जाता है। दोनों की चाल समान होने पर भी इलैक्ट्रोन भार अधिक होने के कारण पीछे रह जाता है।

परमाणु-शक्ति उद्गम—सापेक्षता सिद्धान्त पर- ' शक्ति का उद्गम स्थान जानने में भी सहायक ः है। किसी भी वस्तु को ऊर्जा प्रदान की जा और फिर उसे उससे वापस लेकर उसे किसी । काम में लगाया जा सकता है। सापेक्षता का ..-कहता है कि पदार्थ (मैटर) को ऊर्जा में । जा सकता है और ऊर्जा को फिर

पदार्थ बनाया जा सकता है। किसी विशेष स्थिति में किसी पदार्थ का कोई भाग लुप्त होकर ऊर्जा का रूप ग्रहण कर सकता है। पदार्थ के थोड़े से भी भाग को लुप्त करने पर पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा प्राप्त हो जाती है। उदाहरण के तौर पर पानी की एक बूद को यदि ऊर्जा में बदल दें तो वह एक बड़े जहाज को पृथ्वी के पांच चक्कर कटवा सकता है। एक बूद पानी में इतने अधिक परमाणु होते हैं। हम ऊपर बतला चुके हैं कि हर परमाणु के नाभिक में ऊर्जा होती है।

विभिन्न परमाणुओं के अलग-अलग भार ज्ञात होने पर वैज्ञानिकों ने ऊर्जा और पदार्थ के पारस्परिक सम्बन्ध की जानकारी प्राप्त की। उन्होंने अपनी मशीनों द्वारा तीव्रगामी कणों को मेघ-प्रकोष्ठ में फेंका। इससे वे कण नाभिकों से टकराए और नए परिणाम सामने आए। इससे ज्ञात हुआ कि उन कणों की टक्कर होने से पूर्व और टक्कर के पश्चात कैसी गति रही। उसमें निश्चित क्रम से वृद्धि हुई और यही परमाणु ऊर्जा है। अब सोचिए यह ऊर्जा कहां से आई। और वैज्ञानिकों ने टक्कर के पश्चात बचे कणों की जांच की तो उनका भार कम हो गया था। इससे सिद्ध हुआ कि वह अतिरिक्त ऊर्जा इन्हीं कणों में से आई।

परमाणु बम का निर्माण

वैज्ञानिकों ने परमाणु को तोड़ा, प्रोटोन, न्यूट्रोन की खोज की, नाभिक की ऊर्जा का ज्ञान प्राप्त किया, परन्तु उसे किसी व्यावहारिक उपयोग में लाने की समस्या हल न हो पाई। परमाणु की ऊर्जा वैज्ञानिकों के लिए सन्दूक में बन्द खजाने के रूप में रह गई। साइक्लोट्रोन जैसी मशीनें परमाणु के नाभिकों पर तीव्रतम प्रहार करके भी ऊर्जा न निकाल पाईं।

प्रोटोनों के स्थान पर न्यूट्रोनों का प्रयोग—न्यूट्रोनों में विद्युत का प्रभार नहीं होता, इसलिए वह सरलता पूर्वक नाभिक तक पहुंच जाता है। न्यूट्रोनों की चाल मन्दी करने के लिए उन्हें पैराफीन या कार्बन इत्यादि से गुजारा जाता है। दूसरे परमाणुओं की भीड़ के अन्दर से वे तेजी से नहीं गुजर सकते।

रोम के वैज्ञानिक एनरिको फेर्मी ने यूरेनियम परमाणु के नाभिक में एक न्यूट्रोन चिपकाकर उसे

भारी बनाने का प्रयास किया। इसी प्रकार के परीक्षण अन्य प्रयोगशालाओं में भी किए गए। एक जर्मन वैज्ञानिक ने भी ऐसा परीक्षण करके बताया कि न्यूट्रोन के यूरेनियम नाभिक से टकराने पर बेरियम का परमाणु शेष रह जाता है, जो यूरेनियम परमाणु से लगभग आधा होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि न्यूट्रोन की इस टक्कर ने यूरेनियम के परमाणु को दो भागों में विभक्त कर दिया और उन्हीं में से एक बेरियम परमाणु है। यह नाभिक का सबसे बड़ा विखण्डन हुआ।

यह विखण्डन १९३९ के आस-पास हुआ। इस समय हिटलर ने सत्ता सम्भाल ली और जर्मन के बहुत से वैज्ञानिकों को जर्मनी से चला जाना पड़ा था। उनमें से कुछ वैज्ञानिक डेनमार्क में 'कोपिन हेगन इन्स्टीट्यूट आफ थ्योरिटिकल फिजिक्स' में आए। उन्हें यूरेनियम के परमाणु के विखण्डन का ज्ञान था। इस प्रतिष्ठान का अध्यक्ष प्रोफेसर नीएल्स बोहर अपने किसी कार्य से अमरीका गया। उसने अमरीका में जाकर जब यह सूचना दी कि कुछ जर्मन वैज्ञानिकों ने न्यूट्रोनस यूरेनियम के नाभिक को विखण्डित कर बेरियम उत्पन्न कर लिया है तो वहां इसमें बहुत दिलचस्पी दिखाई गई।

न्यूक्लियर फिशन—अमरीकी वैज्ञानिकों ने इसमें दिलचस्पी ली। इंग्लैण्ड और फ्रांस में भी वैसे परीक्षण किए गए। ये विखण्डन टेलीविजन की नली के सामने चमकीलो रेखाओं के रूप में उभरते थे। इस तथ्य में अब किसी को सन्देह न रहा। नाभिक का यह विखण्डन 'न्यूक्लियर फिशन' कहलाया। इससे पूर्व नाभिक को तोड़कर उसमे प्रोटोन, न्यूट्रोन या अलफा कण को ही प्रथक किया गया था। यह विखण्डन एक बिल्कुल नई चीज थी। यह नाभिक का वास्तविक विखण्डन था। इस विखण्डन द्वारा नाभिक से जो ऊर्जा निकली वह अन्य विखण्डों दस से लेकर सोगुनी अधिक थी।

चेन रिएक्शन—इस विखण्डन से पूर्व के विखण्डनों में नाभिकों के अन्दर जो परिवर्तन होते थे वे न तो स्थायी होते थे और न अन्यों को प्रभावित करते थे। उनमें एक से दूसरे और दूसरे से तीसरे में जाने योग्य ऊर्जा न होती थी। इस विखण्डन के पश्चात वैज्ञानिकों ने इस बात की खोज की कि इस विखण्डन से कुछ नए न्यूट्रोन बाहर निकलते हैं या नहीं। यदि ऐसे न्यूट्रोन निकलते हैं तो यूरेनियम के अन्य परमाणुओं विखण्डित कर सकते हैं और फिर उनसे निकले

न्यूट्रोन अन्य बहुत से परमाणुओं को। यह विखण्डन तीव्र से तीव्रतर होता जाएगा और यूरेनियम के ढेर में फैल जाएगा। इस प्रक्रिया की एक शृंखला बन जाएगी।

वैज्ञानिकों ने पता चला लिया कि वास्तव में यूरेनियम के परमाणु को जब न्यूट्रोन खडित करता है। तो उससे न्यूट्रोन निकलते है। इसका मतलब, प्रक्रिया शृंखला स्थापित की जा सकती है। प्रोफेसर बोहर ने यूरेनियम के नाभिक को चिकनी प्लेट पर रखी पानी की बूंद के समान अनुमाना। एक बूंद के विखण्डन से कुछ बूदे इधर-उधर जा गिरेंगी। उनसे नए न्यूट्रोन बाहर आएगें जो यूरेनियम परमाणुओ के अन्य नाभिकों को तोड़ देंगे। फिर और नए न्यूट्रोन निकलेंगे और शृंखला बन जाएगी।

शृंखला बनाने योग्य आईसोटोप—यूरेनियम तीन आइसोटोपों का मिश्रण है, जिनके भार २३४, २३५ और २३८ हैं। अधिकांश यूरेनियम का भार २३८ है। २३५ और २३४ भार के यूरेनियम की मात्रा कम है, परन्तु प्रयोग से ज्ञात हुआ कि विखण्डन प्रक्रिया २३५ भार के आइसोटोपों वाले यूरेनियम में सम्भव है। अब इन आइसोटोपों को पृथक-पृथक करने

न्यूक्लियर फिशन—अमरीकी वैज्ञानिकों ने इसमें दिलचस्पी ली। इंग्लैण्ड और फ्रांस में भी वैसे परीक्षण किए गए। ये विखण्डन टेलीविजन की नली के सामने चमकीलो रेखाओं के रूप में उभरते थे। इस तथ्य में अब किसी को सन्देह न रहा। नाभिक का यह विखण्डन 'न्यूक्लियर फिशन' कहलाया। इससे पूर्व नाभिक को तोड़कर उससे प्रोटोन, न्यूट्रोन या अलफा कण को ही प्रथक किया गया था। यह विखण्डन एक बिल्कुल नई चीज थी। यह नाभिक का वास्तविक विखण्डन था। इस विखण्डन द्वारा नाभिक से जो ऊर्जा निकली वह अन्य विखण्डों दस से लेकर सौगुनी अधिक थी।

चेन रिएक्शन—इस विखण्डन से पूर्व के विखण्डनों में नाभिकों के अन्दर जो परिवर्तन होते थे वे न तो स्थायी होते थे और न अन्यों को प्रभावित करते थे। उनमें एक से दूसरे और दूसरे से तीसरे में जाने योग्य ऊर्जा न होती थी। इस विखण्डन के पश्चात वैज्ञानिकों ने इस बात की खोज की कि इस विखण्डन से कुछ नए न्यूट्रोन बाहर निकलते है या नहीं। यदि ऐसे न्यूट्रोन निकलते है तो यूरेनियम के अन्य परमाणुओं को विखण्डित कर सकते है और फिर उनसे निकले

न्यूट्रोन अन्य बहुत से परमाणुओं को। यह विखण्डन तीव्र से तीव्रतर होता जाएगा और यूरेनियम के ढेर में फैल जाएगा। इस प्रक्रिया की एक शृंखला बन जाएगी।

वैज्ञानिकों ने पता चला लिया कि वास्तव में यूरेनियम के परमाणु को जब न्यूट्रोन खडित करता है। तो उससे न्यूट्रोन निकलते है। इसका मतलब, प्रक्रिया शृंखला स्थापित की जा सकती है। प्रोफेसर बोहर ने यूरेनियम के नाभिक को चिकनी प्लेट पर रखी पानी की बूंद के समान अनुमाना। एक बूद के विखण्डन से कुछ बूंदे इधर-उधर जा गिरेंगी। उनसे नए न्यूट्रोन बाहर आएगे जो यूरेनियम परमाणुओ के अन्य नाभिकों को तोड़ देगे। फिर और नए न्यूट्रोन निकलेंगे और शृंखला बन जाएगी।

शृंखला बनाने योग्य आईसोटोप—यूरेनियम तीन आइसोटोपों का मिश्रण है, जिनके भार २३४, २३५ और २३८ हैं। अधिकांश यूरेनियम का भार २३८ है। २३५ और २३४ भार के यूरेनियम की मात्रा कम है, परन्तु प्रयोग से ज्ञात हुआ कि विखण्डन प्रक्रिया २३५ भार के आइसोटोपों वाले यूरेनियम में सम्भव है। अब इन आइसोटोपो को प्रथक-प्रथक करने

का प्रश्न सामने आया।

नेप्चूनियम की खोज—जब न्यूट्रोन यूरेनियम २३८ से टकराता है। तो वह उससे चिपक जाता है। वह विखंडित न होकर वह एक बीटा कण (इलेक्ट्रोन) अपने से बाहर फेंक देता है। और स्वयं नेप्चूनियम बन जाता है। नेप्चूनियम यूरेनियम से भी भारी तत्व है। इस परीक्षण से पूर्व यह अज्ञात था। यह रेडियो-सक्रिय होता है। यह इलेक्ट्रान को अपने से बाहर फेंक कर प्लूटोनियम बन जाता है और प्लूटोनियम का नाभिक यूरेनियम २३५ के समान न्यूट्रोन के टकराने से विखंडित हो जाता है। उससे विशाल मात्रा में ऊर्जा निकलती है।

बम बनाने का विचार—द्वितीय महायुद्ध आरम्भ हो चुका था। युद्ध के कारण विश्व के वैज्ञानिकों का पारस्परिक सम्बन्ध टूट गया था। कुछ जर्मन और फ्रांसीसी वैज्ञानिक इंग्लैंड जा कर परमाणु विखण्डन का बम बनाने की दिशा में विचार कर रहे थे। उन्होंने गणना की कि यदि आधा सेर यूरेनियम २३५ के परमाणुओं को तोड़ दिया जाए तो इतना भयंकर धमाका होना सम्भव है जितना दो करोड़ पौंड टी० एन० टी० के विस्फोट में होता है। उस समय तक

टी० एन० टी० का विस्फोट सबसे अधिक शक्तिशाली माना जाता था।

अनुसंधान-दल नियत—ब्रिटिश सरकार ने तुरन्त अनुसंधान-दल नियत किया जो परमाणु बम बनाने पर विचार करने के लिए था। जार्ज टामसन को दल का निर्देशक नियुक्त किया गया। उसके सामने समस्या काफी बड़ी मात्रा में यूरेनियम २३५ एकत्रित करने की थी। इसके लिए परमाणुओं को प्रथक-प्रथक छांटने के यंत्र बनाए गए, जिनमें लगे चुम्बक से हलके आइसोटोप आगे खिंच आते थे और भारी पीछे रह जाते थे। फिर भी यह सरल कार्य नहीं था क्योंकि बम बनाने लिए बहुत सी मशीनों की आवश्यकता थी, जिन्हें बनाना या जुटाना उस समय सम्भव न था।

दूसरा उपाय यूरेनियम को किसी अन्य तत्व के साथ मिलाकर गैस बनाने और बारीक छलनी में छानकर २३५ और २३८ यूरेनियम को अलग-अलग करना था। इस प्रकार बार-बार छानने पर २३५ यूरेनियम पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सकेगा।

अमरीका में परमाणु भट्ठी—इन्हीं दिनों अमरीकन साइन्टिस्ट आइन्सटीन ने प्रेजीडेण्ट रूजवेल्ट से इस सम्बन्ध में अनुसंधान करने की बात की। यह सन्

१९४१ की बात है, जब जापान ने पर्लहार्बर पर आक्रमण किया और अमरीका युद्ध में कूद पड़ा। रूजवेल्ट ने युद्ध की स्थिति को देखकर परमाणु अनुसंधान के लिए बड़ी-बड़ी धन राशियां दे डालीं। सन् १९४५ में शिकागो विश्वविद्यालय के एनरिको फेर्मी और उसके साथियों ने परमाणु भट्टी बनाई और ग्रेफाइट (कार्बन का एक रूप) की ईंटें बनाईं। इन ईंटों के बीच यूरेनियम की छोटी-छोटी डलियां रख दीं। ये ईंटें मॉडरेटर के रूप में काम करके न्यूट्रोनों की चाल को कम करने के लिए रखी गई थी, जिससे वे परमाणुओं के न्यूट्रोनों में घुसकर विखंडन की शृंखला बना सकें। इस शृंखला को यदि यह बहुत तेज हो उठे, नियंत्रित रखने के लिए भट्टी के बीच में कैडियम धातु की पत्तरियां रखी गईं। कैडियम न्यूट्रोन को चूस लेता है। इन पत्तरियों से रोकथाम का काम लिया गया।

गीगर गणक (गीगर काउण्टर)—इस यंत्र द्वारा न्यूट्रोनों की संख्या जानी जाती है तथा उनकी नाप की जाती है। इसका आविष्कार रदरफोर्ड के सहकारी हाप्स गीगर ने किया था। यह गैस भरी नली होती है, जिसमें से तीव्र कण या गामा किरण निकलने पर चमक के साथ चट्-चट् होती है। इन सब

सावधानियों को बरतते हुए २ दिसम्बर १६४२ में फर्मी और उसके साथियों ने परमाणु भट्टी चालू की।

भट्टी चालू होने पर जैसे ही नियंत्रक पत्तरियों को निकाला गया तो गीगर गणक से चट्-चट् की ध्वनि भर उठी और वह तीव्र से तीव्र होती गई। यह देखकर फिर पत्तरियां लगा दी गईं और गीगर गणक में होने वाली आवाजें बन्द हो गईं। यह वह नाभिक विखंडन श्रृंखला बनी जो स्वयं जारी रह सकती थी।

नाभिकीय प्रतिकिरण (न्यूक्लियर रिएक्टर)–इस विखण्डन प्रक्रिया को सफलता मिलते ही अमरीकी सरकार ने नाभिकीय सामग्री बनाने के बड़े-बड़े कारखाने बनाने की सुविधा प्रदान की। हैनफोर्ड में तीन विशालकाय भट्टे बनाए गए, जो पांच मंजिल की इमारत जितने ऊंचे थे। इन्हें न्यूक्लियर रिएक्टर नाम दिया गया। इनमें २३८ यूरेनियम को तोड़कर प्लूटोनियम तैयार करने का कार्य आरम्भ हुआ। इस प्रकार यूरेनियम के बहुत बड़े भाग को विखण्डन योग्य बनाया जाने लगा।

जब कोई रिएक्टर विखण्डन कार्य करता है तो उसमें बहुत अधिक ताप उत्पन्न होता है। इसे ठण्डा रखने के उपाय भी किए गए। हैनफोर्ड के रिएक्टर

को ठण्डा रखने के लिए कोलम्बिया नदी का पानी उपयोग में लाया गया, परन्तु साथ ही वैज्ञानिकों ने इस ऊर्जा को व्यर्थ नष्ट न करके उपयोग में लाने की दिशा में भी विचार किया। टेनेसी राज्य में ओकरिज नामक स्थान पर छानने की पद्धति से २३५ यूरेनियम बनाने का बहुत बड़ा कारखाना स्थापित किया गया। इन कारखानों की सहायता से अमरीका में यूरेनियम २३५ और प्लूटोनियम इतनी मात्रा में उपलब्ध हो गए कि उनसे बम बनाए जा सकें।

पहला परमाणु बम--१६ जुलाई १९४५ को प्रथम अमरीकी परमाणु बम तैयार हुआ, जिसका न्यू मेक्सिको के मरुस्थल में सफलतापूर्वक परीक्षण हुआ। ६ अगस्त १९४५ में एक अमरीकी बम वर्षक जहाज ने २३५ यूरेनियम से बना परमाणु बम जापान में हिरोशिमा पर गिराया। इसके तीन दिन पश्चात प्लूटोनियम से बना बम जापान के ही नागासाकी नगर पर गिराया गया। परिणाम विश्व के समक्ष है। जापान ने आत्म समर्पण कर दिया। युद्ध समाप्त हो गया और संसार को पता चला कि विनाशकारी परमाणु बम का निर्माण अमरीका में हो चुका।

विस्तार से खोज

सूर्य में नाभिकों का विखण्डन—परमाणु विखण्डन की प्रक्रिया ने इस रहस्य का उद्घाटन किया कि सूर्य तथा अन्य तारागण इतने वर्षों से कैसे चमक रहे हैं। इतनी ऊर्जा उन्हें नाभिकों के विखण्डन से ही प्राप्त होती है। रेडियो सक्रियता मे जब नाभिकों का विखण्डन होता है तो उससे तीव्रगामी-कण और गामा किरणे निकलती हैं।

सूर्य के केन्द्र का तापमान लगभग ४ करोड़ डिग्री है। सूर्य की ऊपरी तह का भार भीतरी तहों की अपेक्षा दस लाख गुना से भी अधिक है। ऐसी दशा बाहरी इलैक्ट्रोनों का दबाव न होने की वजह से तीव्र-गामी प्रोटोन परस्पर टकराते और विखण्डित होते होंगे। भौतिकी विद्वानों ने दूसरे विश्व युद्ध से पूर्व सूर्य के विषय में यह अनुमान लगाया था।

न्यूक्लियर फ्यूज़न—परमाणुओं की प्रक्रिया में चार हाइड्रोजन परमाणु मिलकर हीलियम का एक

परमाणु बनाते हैं। इस प्रकार हलके परमाणुओं से मिलकर बड़ा परमाणु बनना न्यूक्लियर फ्यूजन कहलाता है। विश्व युद्ध से पूर्व इतना ऊंचा तापमान पैदा करने का उपाय न होने के कारण यह विचार मात्र गणित से बताया गया था।

परमाणु विखण्डन की प्रक्रिया आरम्भ होने पर यह सरल हो गया कि सूर्य और तारों की ऊर्जा की व्याख्या की जा सके। वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि सूर्य में कार्बन, आक्सीजन और नाइट्रोजन इत्यादि के नाभिक भी विखण्डन क्रिया में व्यस्त हैं। इस प्रक्रिया में कार्बन इत्यादि के परमाणु नष्ट नहीं होते, केवल हाइड्रोजन समाप्त हो जाती है, परन्तु सूर्य में हाइड्रोजन इतनी मात्रा में उपलब्ध है जो करोड़ों वर्षों तक समाप्त नहीं हो सकती।

संलयन द्वारा अधिक ऊर्जा उपार्जन—वैज्ञानिकों ने यह ज्ञान प्राप्त कर कि हाइड्रोजन परमाणुओं को मिलाकर हीलियम बनाया जा सकता है और उससे ऊर्जा भी आ सकती है, तो उन्होंने इस दिशा में प्रयोग आरम्भ किए। उन्होंने परीक्षण करके देखा कि भारी तत्वों के परमाणु टूट कर हल्के तत्वों के परमाणु बन जाते हैं और उनसे ऊर्जा उत्पन्न होती है, परन्तु यह

हलके तत्वों के परमाणु भारी तत्वों में बदलते हैं तो अधिक ऊर्जा मिलती है ।

द्वितीय विश्व-युद्ध समाप्त होने पर वैज्ञानिक नाभिकों के सगलन पर तेजी से जुट गए । वे संगलन द्वारा विखण्डन से सैकड़ों गुनी ऊर्जा प्राप्त करने की कल्पना कर रहे थे। सगलन मे काम आने वाली यूरेनियम विखण्डन योग्य यूरेनियम से अधिक मात्रा मे उपलब्ध न थी । उन्हे आवश्यकता थी ऊंचे तापमान की जो हलके नाभिकों को तेजी से टकराने की शक्ति रखती हो । इसके लिए उन्होंने परमाणु बम का प्रयोग करने का निश्चय किया परन्तु विचार करने पर ज्ञात हुआ कि वे इसमें सफल नही हो सकते थे । इसके लिए उन्हे तिगुने भार वाले बम से सफलता मिलनी सम्भव थी । इसके लिए दक्षिणी कैरोलिना में कारखाना लगाया गया परन्तु इस प्रक्रिया में लागत बहुत अधिक आई यानी एक पौंड हाइड्रोजन-३ पर लगभग ५० लाख रुपया ।

हाइड्रोजन बम—इसके आगे की परियोजना गुप्त रखी गई, इसलिए उसके विषय में कुछ नही कहा जा सकता । इतना अवश्य ज्ञात है कि इस हाइड्रोजन बम का पहली नवम्बर १९५२ में विस्फोट किया गया ।

उस विस्फोट में ऐनीवीटोक द्वीप समूह का एक टुकड़ा नष्ट हो गया था । अनुमानतः उस बम की शक्ति परमाणु बम से सौगुनी थी । इसमें हाइड्रोजन-२ के साथ हाइड्रोजन-३ को मिलाया गया था ।

नियंत्रित प्रयोग—अब वैज्ञानिकों ने नाभिकों के विखण्डन और संगलन से प्राप्त ऊर्जा के विषय में जानकारी प्राप्त कर ली थी । इसका उपयोग प्रयोग बम प्रयोगों में किया जा चुका था । वैज्ञानिकों ने सोचा कि यदि इसे निकालने का नियंत्रित प्रयोग किया जाए तो इसे उपयोगी व्यवहारिक काम में लाया जा सकता है । वे सभी उपयोग थे जिनके लिए अभी तक विद्युत तथा अन्य ऊर्जाओं का प्रयोग किया जाता था । जैसे कल कारखाने चलाना, प्रकाश करना इत्यादि । इनके संयंत्र भी काफी दिन पहले से बनने लगे थे ।

इन संयंत्रों की दिशा में वैज्ञानिकों तथा इंजीनियरों ने विशेष रुचि ली क्योंकि इनसे अन्य ऊर्जाओं की अपेक्षा अधिक शक्ति प्राप्त हो जाती थी । इस ऊर्जा को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना भी अन्य ऊर्जा प्रसाधनों की अपेक्षा अधिक सरल था । यूरेनियम २३५ के एक पौंड टुकड़े में ४०,००० मन कोयले के बराबर ऊर्जा उत्पादन शक्ति है । इससे भी

बड़ी बात यह है कि ऊर्जा के वर्तमान स्रोत दिन-दिन घटते जा रहे है। इसलिए अन्य ऊर्जा स्रोतों का पता लगाना आवश्यक हो गया था।

वैज्ञानिक इस दिशा में प्रगतिशील हैं कि नाभिकीय प्रतिकरण से उपलब्ध ऊर्जा को अन्य ऊर्जाओं से चलने वाले यंत्रो के चालन में कैसे लाया जाए। यदि यह उपलब्धि प्राप्त हो जाती है तो निश्चय ही अन्य ईंधनो की खपत मे काफी कमी आ सकती है।

नाभिकीय प्रतिकरण वही कार्य करता है जो अन्य कल कारखानों मे भट्टिया करती है। भट्टियों मे ताप पैदा करने के लिए कोयला जलाया जाता है और इनमें नाभिकों के विखण्डन और संगलन से ताप उत्पन्न होता है। विजलीघरों में ताप पैदा करने के पश्चात की अन्य सब प्रक्रिया समान है।

नाभिकीय प्रतिकरण से सुरक्षा--इसके आस-पास काम करने वालों की सुरक्षा के लिए इसके चारों ओर सीसे या कंकरीट की भारी दीवार होती है। साधारण उपायों से सुरक्षा सम्भव नहीं। इसीलिए अब तक परमाणु शक्ति का उपयोग वायुयानों या मोटरगाड़ियों मे नहीं किया जा सका है। यह सुरक्षा का प्रबन्ध भारी कल-कारखानों में ही सम्भव है।

नौटीलस पनडुब्बी—नाभिकीय संयंत्र का पनडुब्बियों में उपयोग सम्भव है। ये पानी के नीचे-ही-नीचे चल सकती हैं। ऐसी पनडुब्बी के मोटर का पहले-पहल परीक्षण ईडाहों के पहाड़ों में किया गया था। १९५४ में उसे अटलांटिक महासागर में उतारा गया। उसके बाद नौटीलस पनडुब्बी बनाई गई, जिसने १९५५ पहली सफल यात्रा की। अब इस प्रकार की पनडुब्बियां बन चुकी हैं।

यूरेनियम की उपलब्धि—उक्त विवरण से यह तो स्पष्ट हो गया कि नाभिकीय बिजलीघरों से बिजली और ऊर्जा की काफी समस्या हल हो सकती है, परन्तु प्रश्न यह है कि क्या संसार में इतना यूरेनियम उपलब्ध है जो इसका बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किया जा सके। यूरेनियम की खानें बहुत कम जगह मिलती हैं। इन खानों की खोज आज हर देश में की जा रही है। इनकी खोज गीगर-गणक से की जा सकती है।

उत्पादक प्रतिकरण—पहाड़ों में बनाए गए कारखाने में ऐसा रिएक्टर लगाया गया है जो शक्ति के साथ-साथ, नाभिकीय ईंधन तैयार करता है। इसे उत्पादक प्रतिकरण नाम दिया गया है। यह ऐसी बात है जो कोई कहे कि फलां भट्टी कोयला जलाती भी है

और बनाती भी है, परन्तु बात सच है ? ऐसे प्रतिकरण में थोड़ा-सा यूरेनियम २३५ थोरियम के साथ मिला दिया जाता है। थोरियम तत्व यूरेनियम से बहुत अधिक मात्रा में मिलता है।

परमाणु ऊर्जा आयोग का मत है कि जितना यूरेनियम और थोरियम विश्व में उपलब्ध है। उससे ५००० वर्ष की आवश्यकता पूरी हो सकती है। यह भी सम्भव है कि इस बीच संगलन ताप का भी उपयोग व्यवहारिक कल-कारखानों के लिए किया जा सके। ऐसा होने पर नाभिकीय ईंधन की अपरिमित मात्रा हो जाएगी।

नाभिकीय शक्ति का मूल्य—अब सोचने की बात यह है कि नाभिकीय ताप उत्पादन अन्य ऊर्जाओं के ताप उत्पादन से मंहगा तो नही हो जाता। यदि वैज्ञानिकों की उत्पादक प्रतिकरण की धारणा सफल हो जाती है तो निश्चय ही यह ताप उत्पादन अन्य ऊर्जाओं से बहुत सस्ता पड़ेगा। इस दिशा में सबसे सफल प्रयोग ताप बिजलीघर बनाने की दिशा में हो रहा है। भारत मे भी इस प्रकार के बिजलीघर बनाए जा रहे है। इससे बिजली का उत्पादन बढ़ेगा।

परमाणु खोजों का व्यवहारिक मूल्यांकन

आणविक आविष्कारों के उपयोग आम व्यवहार में भी उपयोगी सिद्ध हुए। इनमें आइसोटोपों का उपयोग बहुत महत्वपूर्ण रहा। इनका उपयोग वैज्ञानिक अनुसंधानों और गम्भीर रोगों के इलाजों में होता है। जिन आइसोटोपों से तेज किरणें निकलती हैं उन्हें शरीर के रुग्ण सैलों को नष्ट करने के लिए प्रयोग किया जाता है। कम तेज किरणों वाले आइसोटोप अन्वेषण के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। ये परमाणु जहां से होकर जाते हैं अपने निशान बना देते हैं। वैज्ञानिक उन निशानों का अपने सूक्ष्म उपकरणों से परीक्षण करते हैं।

रेडियो डिटेक्टर—विकिरण सूचक (रेडियेशन डिटेक्टर) से डाक्टर रोगी के शरीर में होने वाले ट्यूमर का पता लगा सकता है। उससे पता चल जाता है कि ट्यूमर कितना बड़ा और किस स्थान पर

है। ट्यूमर का पता चलने पर डाक्टर रोगी के शरीर में थोड़ी-सी मात्रा रेडियो फासफोरस को इंजेक्ट करता है जो रक्त-प्रवाह में मिलकर शरीर के सब भागों तक पहुच जाता है।

रेडियो आयोडीन—यह भी परमाणु प्रतिकरण यंत्र में बनती है। इससे चिकित्सक थाइरायड ग्रन्थि के रोगों की चिकित्सा करते हैं। यह ग्रन्थि गले में होती है। सक्रिय आइसोटोप के कुछ भाग थाइरायड ग्रन्थि को सोख लेते हैं। इस ग्रन्थि में आयोडीन की जो मात्रा जाकर जम जाती है, उसे विकिरण सूचक यंत्र से जाना जा सकता है। इससे डाक्टर थाइरायड ग्रंथि की स्थिति जान लेता है।

कैंसर—दीर्घकालीन ट्यूमर या कैंसर को नष्ट करने के लिए गामा किरणें और रेडियम की एक्सरेज का उपयोग किया जाता है। इनका प्रयोग गम्भीर स्थिति में होता है। यदि रोग की स्थिति गम्भीर नहीं है तो इनसे लाभ के स्थान पर हानि हो सकती है। इन खोजों से मानव-स्वास्थ्य की दिशा में पर्याप्त लाभ हुआ है। सूक्ष्म-वीक्षण यंत्र के आविष्कार के बाद रेडियो आइसोटोपों का इस दिशा में महत्वपूर्ण योग है।

पशु-पालन पर प्रभाव—रेडियो आइसोटोप पशु-

आइसोटोपों का उपयोग इंजीनियरिंग के क्षेत्र में भी बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। लोहे के कारखानों में, लोहे की चादरें बनाते समय विकिरण सूचक यंत्र इनके मोटी पतली होने की सूचना ही नहीं देता वरन् मोटर को संकेत देता है और मोटर स्वयं चादर को मोटा-पतला करने के लिए उन्हें सख्त या ढीला करके चादर को एक-सी मोटाई में ले आता है। उनकी मोटाई और पतलाई में वह दो हजारवें अंश तक का भी अन्तर नहीं आने देता।

मिट्टी के तेल क्षेत्र में प्रयोग—पैट्रोल, तेल, क्रूड तथा मिट्टी के तेल की अलग-अलग टंकियां होती हैं। परन्तु उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने वाली पाइप लाइनें एक ही होती हैं। उनमें बारी-बारी से ये तेल गुजरते हैं। एक तरह के तेल का आना बन्द होने और दूसरी तरह के तेल के आने की सूचना संदेश-वाहक यंत्र से प्राप्त होती है। इसके लिए नया तेल भेजना आरम्भ करते समय उसमें थोड़ा-सा रेडियो-सक्रिय तेल मिला दिया जाता है। इस रेडियो सक्रिय तेल के दूसरे सिर पर पहुंचते ही विकिरण सूचक यंत्र चालू हो जाता है और उसे देखकर काम करने वाले लोग पाइपलाइन का रुख दूसरी टंकी की दिशा में

कर देते है।

रसायन वेत्ताओं के लिए उपयोगी—आइसोटोपों से निकली किरणें प्लास्टिक, कीटाणुनाशक दवाओं तथा अन्य रसायनिक पदार्थ बनाने में उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इससे अनेकों नई-नई प्रकार की चीजें बनाई जा सकी हैं, जैसे कांच की बोतलों के स्थान पर प्लास्टिक की लचकीली बोतलें, जो अब बहुत प्रचलित हैं। ये कांच की बोतलों की तरह टूटती नहीं और इन्हें पैक करके बाहर भेजने में भी काफी सुविधा है।

इसी प्रकार इन आइसोटोपों का प्रयोग अन्य क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक किया जा रहा है और ये बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।

००१

सूर्य

विषय-क्रम

सुरूचिपूर्ण

बाल-साहित्य

के

शीर्षस्थ प्रकाशक

सौर-परिवार

विस्तृत ब्रह्माण्ड में अनेकों नक्षत्र-झुंड हैं। इन्हीं झुंडों में एक लगभग चालीस नक्षत्रों का झुंड है, जो अन्य झुंडों से अलग-थलग दिखाई देता है। इस झुंड का सबसे अधिक प्रकाशमान नक्षत्र सूर्य है। सूर्य इस नक्षत्र-झुंड का मुखिया माना जाता है। वैज्ञानिक भाषा में इस झुंड को सौर-परिवार अथवा सौर-मण्डल (सोलर सिस्टम) कहा जाता है। सूर्य की स्थिति इस झुंड में अन्य सब नक्षत्रों के बीच में है।

इस सौर परिवार के नौ प्रमुख नक्षत्र हैं। ये सब नक्षत्र-सूर्य से प्रकाश पाते हैं। वैज्ञानिक भाषा में इन्हें सूर्य के ग्रह (प्लेनेट्स) कहा जाता है, जो सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते रहते हैं। आज जैसे वैज्ञानिक उपकरण उपलब्ध न होने पर भी प्राचीन विद्वानों ने इन्हें अन्य नक्षत्रों से पृथक मानकर ग्रह नाम दिया था। वे लोग पृथ्वी को छोड़कर इनकी संख्या पांच मानते

थे। इनके नाम बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति और शनि थे। नेपचून, यूरेनस और प्लूटो की खोज बाद में की गई। भारतीय खगोल-शास्त्री इन्हें वरुणि, वरुण और यम कहते हैं। चन्द्रमा सूर्य का उपग्रह है। इन ग्रहों में बृहस्पति सबसे महत्वपूर्ण है, जिसके १२ लघुपिंड हैं, शनि के ९; वारुणि के ५ तथा मंगल और वरुण के दो-दो। बुध और शुक्र अकेले ही हैं।

उक्त नौ ग्रहों और इकत्तीस उपग्रहों के अतिरिक्त भी सूर्य के इर्द-गिर्द घूमने वाले अन्य अनेकों पिण्ड हैं। मंगल और बृहस्पति की कक्षाओं के बीच एक पिण्डों की पट्टी-सी है। इनमें सबसे बड़े पिण्ड का नाम सीरियस है, जिसकी खोज सिसली के विद्वान् ने १८९१ में की थी। सन् १८९१ तक इन पिण्डों की गणना ३२२ तक हो चुकी थी। ये लघु पिण्ड कभी-कभी अपना स्थान छोड़कर पृथ्वी के काफी निकट तक आ जाते हैं। उन्हें उल्का कहा जाता है। वे कभी-कभी पृथ्वी पर गिरकर गढ़ा भी कर देते हैं। यम के बाहर एक अन्य कक्षा है, जिसमें छोटे-बड़े अनेकों पिण्ड घूमते रहते हैं। इनमें से छिटकने वाला पिण्ड जब पृथ्वी के निकट से गुजरता है तो उसकी एक चमकीली पूंछ-सी दिखती है। इसे पुच्छलतारा या धूमकेतु कहा जात

है। कभी-कभी इस पूंछ के खण्ड भी उल्का बनकर पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश कर जाते हैं।

सूर्य के परिवार में कुछ अन्य मुक्त पिण्ड भी हैं, जो बिना कक्षा के ही मुक्त रूप से घूमते रहते हैं। इसके अतिरिक्त सौर-मण्डल में शून्य-ही-शून्य है, अरबों किलोमीटर का शून्य। वैज्ञानिकों ने इस शून्य में भी कुछ स्थितियां खोज निकाली हैं।

बुध-ग्रह—जो ग्रह सूर्य से सबसे अधिक निकट है, वह भी उससे लगभग छः करोड़ किलोमीटर की दूरी पर है। इसकी चाल लगभल ४७०० किलोमीटर है। यदि हम पृथ्वी से देखें तो यह हमें सूर्य की दिशा में दिखाई देगा। सूर्य का प्रकाश अधिक होने के कारण यह दिखाई नहीं देता। कोपरनिकस आजीवन प्रयास करने पर भी इसे न देख पाया था। कालान्तर में विद्वानों ने मार्च-अप्रैल में सूर्यास्त के समय या सितम्बर अक्टूबर में सूर्योदय के समय उपकरणों की सहायता से इसे देखा। दूरदर्शियों की सहायता से इसे दोपहर में भी देखा जा चुका है। जब सूर्य, पृथ्वी और बुध एक सीध में आ जाते हैं तो यह सूर्य पर एक धब्बे के रूप में दिखता है। बुध इस प्रकार सूर्य के सामने सौ वर्षों में केवल १२-१३ बार ही आता है। ६ मई

सन् १६७० में यह दृश्य वैज्ञानिकों ने देखा था १० नवम्बर १६८३ में ऐसा फिर हुआ था।

बुध-ग्रह सूर्य के निकट होने के कारण पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य से छः गुनी शक्ति प्राप्त करता है। पहले विचार था कि इस ग्रह का एक ही भाग सर्वदा सूर्य की ओर रहता है। इससे कल्पना की जा सकती है कि वहाँ कितनी अधिक गरमी होगी। नर्म धातुएं पिघलकर बहने लगती होंगी। इससे यह भी स्पष्ट था कि बुध के आधे भाग में सर्वदा दिन और आधे में सर्वदा रात रहती होगी, परन्तु अब वैज्ञानिकों का मत है कि यह ग्रह भी अपने अक्स पर धीरे-धीरे घूमता है। इन वैज्ञानिकों के मतानुसार बुध-ग्रह का एक दिन पृथ्वी के नौ दिनों के बराबर होता है और उसका एक वर्ष हमारे ८८ दिनों के बराबर।

बुध के वायुमण्डल में न बादल हैं और न वहाँ वर्षा होती है। वायु-मण्डल भी वहां बहुत कम है। वहां का धरातल चन्द्रमा के समान पथरीला है। पृथ्वी पर से देखने पर कभी वह उज्ज्वल, कभी आधा उज्ज्वल और कभी काला दिखाई देता है। इसका . सूर्य और पृथ्वी के बीच होने के कारण देख ना सरल नहीं। इसलिए इसकी कलाओं का प्रभाव

भी महत्वपूर्ण नहीं हैं। यदि यह भी चन्दमा इत्यादि के समान दिखाई पड़ता, तो इसकी कलाएं भी महत्वपूर्ण होतीं।

शुक्र-ग्रह—यह ग्रह देखने में भले ही पर्याप्त चमकदार और सुन्दर प्रतीत होता हो, परन्तु वैज्ञानिकों का खयाल है कि उसकी इस चमचमाहट के पीछे गड़गड़ाते बादल, भयंकर ववण्डर, धूलभरे तूफान और धमाकेदार गर्जन छिपे हैं। ये बादल पानी के नहीं, कार्बनडाईऑक्साइड के हैं। यह घातक गैस है। इन बादलों में जो थोड़ा बहुत पानी है, वह बरसकर भी भूतल को नहीं छू पाता। वह बीच में से ही भाप बनकर उड़ जाता है। यह सूर्य के इतना निकट है कि वहां भयंकर गर्मी पड़ती है। सन् १९६२ में अमरीकी अंतरिक्षयान मेरीइनर—२ इसके ३०,८६० किलोमीटर पास से गुजरा था। वैज्ञानिकों के अनुसार इसका ताप-मान ४०० अंश शतांश (सेण्टीग्रेड) के लगभग है। इस गर्मी में गर्म धातु पिघल सकती है। इतनी गर्मी में जीवन का होना सम्भव नहीं। वैज्ञानिकों के इस मत की पुष्टि १९६१ में शुक्र-ग्रह पर उतरने वाले रूसी यान ने की। उसने बतलाया कि वहां का वायु-मण्डल पृथ्वी के वायुमण्डल से १५ गुना गहरा है।

शुक्र-ग्रह सूर्य से १० करोड़ ८० लाख किलोमीटर की दूरी पर है। इसका व्यास १२,४०० किलोमीटर है। यह पृथ्वी से कुछ ही छोटा है। शुक्र का वर्ष पृथ्वी के २२५ दिन के बराबर है। इसके दिन का कोई अनुमान नहीं है, फिर भी यह पृथ्वी के दो दिन के बराबर तो होगा ही।

मंगल-ग्रह—मंगल-ग्रह सूर्य से लगभग २२ करोड़ ८० लाख किलोमीटर की दूरी पर है। इस ग्रह के विषय में वैज्ञानिकों ने पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर ली है। यह अपनी कक्षा में घूमता हुआ कभी-कभी पृथ्वी के पर्याप्त निकट, यानी साढ़े पांच करोड़ किलोमीटर तक आ जाता है। २३ अगस्त १९२४, ७ सितम्बर १९५६ और १० अगस्त १९७१ में ऐसी स्थिति बनी थी। चन्द्रमा के पश्चात् मनुष्य ने यदि किसी ग्रह पर उतरने का विचार किया है, तो वह मंगल-ग्रह ही है। सम्भव है निकट भविष्य में यह सम्भव हो सके।

कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि मंगल-ग्रह पर जीवन है। यदि नहीं भी है, तो कभी रहा अवश्य है। इसका धरातल लाल रंग का है। इसीलिए पुराने ...ो इसे युद्ध का देवता मानते थे। इसका धरातल ... है और वहां भयंकर तूफान उठते हैं। इस लाल

रंग को काटती हुई काली रेखाएं दिखाई देती हैं। प्राचीनकाल में इन्हें मंगल-ग्रह की नदियां और नहरें माना जाता था। यदि ये नहरें हैं तो इन्हें बनाने वाला बुद्धिमान जीवन भी वहां होना चाहिए। नहरें खेती के लिए बनाई गई होंगी, परन्तु अब वहां का वायुमण्डल क्षीण हो जाने के कारण वहां जल की कमी हो गई है। विद्वान् मानते आए हैं कि मंगल-ग्रह पृथ्वी से प्राचीन है और वहां जीवन भी पहले आया।

मंगल के ध्रुव-प्रदेशों पर सफेदी दिखती है। इस सफेदी का क्षेत्रफल लगभग ६० लाख वर्ग मीटर हैं। है। सम्भव है यह बर्फीला प्रदेश है और नहरों में पानी इसी प्रदेश से आता जाता हो। मंगल-ग्रह का व्यास पृथ्वी के व्यास से लगभग आधा है, अर्थात् ६८०५ किलोमीटर। इसका वर्ष पृथ्वी के ६८७ दिन के बराबर है। इसका दिन पृथ्वी के दिन से आधा घंटा बड़ा है।

मंगल-ग्रह की एक विशेष बात यह है कि इसके चारों ओर दो चांद फाइबॉस और डाइमोस चक्कर लगाते हैं।

बृहस्पति-ग्रह—बृहस्पति सबसे बड़ा ग्रह है। इस व्यास लगभग १,४००,०० किलोमीटर है। इसमें ... हर ग्रह समा सकते हैं। यह पृथ्वी से १३०

गुना बड़ा तथा वजन ३१३ गुना है। इतना बड़ा होने पर भी यह केवल १० घंटों में अपने अक्ष के गिर्द चक्कर लगा लेता है, परन्तु सूर्य की प्रदक्षिणा यह बारह वर्ष में करता है।

यह ग्रह सूर्य से लगभग ७८ करोड़ किलोमीटर की दूरी पर है। इस लिए इसे सूर्य से बहुत कम उर्जा प्राप्त होती है। यह पृथ्वी को मिलने वाली उर्जा से ७५ गुना कम है, परन्तु इसके चारों ओर घना वायु-मण्डल है। विद्वानों का मत है कि यहां का तापमान १३० सेण्टीग्रेड से भी कम होगा। ऐसी स्थिति में इसका सम्पूर्ण धरातल कठोर बर्फ से आच्छादित हो सकता है। वृहस्पति के धरातल का रंग कुछ-कुछ पीलापन लिए है। दूरबीन से देखने पर इस पर पट्टियां सी प्रतीत होती हैं। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ये पट्टियां गैसों की बनी है। समयानुसार इनके आकार और रंग में परिवर्तन आता रहता है। यह परिवर्तन इसके वायुमण्डल में होने वाली उथल-पुथल के कारण है। इस ग्रह का दक्षिणी गोलार्द्ध लाल रंग का धब्बा-सा प्रतीत होता है। इसका आकार अण्डाकार है और इसकी लम्बाई ५०,००० किलोमीटर है तथा चौड़ाई २०,००० किलोमीटर। इसके अतिरिक्त कई सफेद

रंग के धब्बे हैं, जो बर्फ से लगते है।

शनि-ग्रह—शनि-ग्रह का व्यास १,२१,००० किलोमीटर है। इसके ऊपर पगड़ी जैसी मेखलाएं हैं। इस ग्रह का दिन पृथ्वी के दस घण्टे से कुछ बड़ा होता है। इसका एक वर्ष पृथ्वी के १०,७६० दिन का होता है और शनि के २५,८२४ दिन का। सूर्य से यह १,४२,७०,००,००० किलोमीटर दूर है। इसे पृथ्वी से केवल सौवें भाग के बराबर ही शक्ति सूर्य से मिल पाती है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि इस ग्रह पर कितनी ठण्ड होगी।

वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इस ग्रह की मेखलाएं पृथक्-पृथक् कणों के मिश्रण से बनी है। पट्टियां शनिग्रह की परिक्रमा करती रहती हैं। शायद ये कण कभी किसी शनि के उपग्रह का अंश रहे होंगे, जिसका विघटन हो चुका है। इनमें से शनि के निकट की पट्टी की चौड़ाई १६ हजार किलोमीटर है तथा अन्य दो की क्रमशः २६,५०० तथा १६,५०० किलोमीटर। इन पट्टियों को मिलाकर शनि का व्यास २,७२,५०० किलोमीटर हो जाता है, जो वृहस्पति के व्यास से भी बड़ा ... विद्वानों का ज्ञान केवल उक्त पांच ग्रहों ... सीमित तथा जिन तीन नए ग्रहों को आधुनिक

वैज्ञानिकों ने खोज की है। उसकी जानकारी बहुत सीमित है। जो उपलब्ध है, वह प्रस्तुत कर रहे हैं।

यूरेनस-ग्रह—इस ग्रह का व्यास ४७,५०० किलोमीटर है और यह सूर्य से २८,५०० लाख किलोमीटर की दूरी पर है। यह पृथ्वी से बहुत दूर है, इसलिए इसके धरातल के विषय में अभी कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं है। इसका दिन पृथ्वी के पौने ग्यारह घंटे के बराबर है और वर्ष ८४ वर्षों के बराबर।

नेप्चून-ग्रह—नेप्चून-ग्रह सूर्य से ४५० करोड़ किलोमीटर की दूरी पर है। इसका पता लगभग १०० वर्ष पूर्व चल गया था। इस ग्रह का व्यास ४४,५०० किलोमीटर है। इसका दिन अनुमान से पृथ्वी के १५ घंटे का होता है और वर्ष पृथ्वी के १६५ वर्षों के बराबर होता है।

प्लूटो-ग्रह—यह सूर्य से सबसे अधिक दूरी पर है। इसे ४० वर्ष पूर्व इन्सान की दृष्टि से देखा। इस का व्यास लगभग ५,८०० किलोमीटर है और सूर्य से दूरी लगभग ५९० करोड़ किलोमीटर। यह जिस कक्षा में सूर्य की प्रदक्षिणा करता है उसका व्यास लगभग १२ करोड़ किलोमीटर है। वर्तमान वैज्ञानिक खोजों के अनुसार यह १२ करोड़ किलोमीटर सौर परिवार का घेरा है।

सूर्य का आकार

विस्तार—सूर्य के विस्तार का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि इसके पेट में पृथ्वी के आकार के १३,०६,००० पिण्ड समा सकते हैं। सूर्य का व्यास लगभग १३ लाख ६० हजार किलोमीटर वैज्ञानिकों का अनुमान है। इस माप से सूर्य की विशालता का अनुमान लगाया जा सकता है।

वजन—यदि हम सूर्य का वजन किलोग्रामों में जानना चाहें तो २ के पश्चात् हमें ३० बिन्दु लगाने की आवश्यकता होगी। मोटे तौर पर समझिए कि सूर्य का वजन पृथ्वी से ३,३३,४२० गुना अधिक है। सम्पूर्ण सौर मण्डल का वजन यदि ७०० मानें तो इसमें से ६९९ वजन सूर्य का है और एक में शेष सब का वजन आ जाता है।

रिक्रमा—सूर्य के ग्रह १२ अरब किलोमीटर के अपने अक्ष पर घूमते हुए सूर्य की परिक्रमा

करते हैं। सूर्य केवल अपने ही अक्ष के इर्द-गिर्द घूमता है। इसका धरातल अन्य ग्रहों के समान ठोस नहीं है। यह गैसीय पदार्थों का बना हुआ है। वह एक ठोस पिण्ड के समान नहीं घूमता। उसके पृथक्-पृथक् भाग पृथक्-पृथक् गति से घूमते हैं। घूमने वाली पृथ्वी पर से सूर्य के घूमने को माप पाना कठिन है। फिर भी प्रयास किए गए हैं। सूर्य के बीच की पट्टी, जो पृथ्वी की भूमध्य रेखा के समान है, २७ दिन में अपना चक्कर पूरा करती है। वैज्ञानिकों ने इसका परिभ्रमण काल २५ दिन माना है। इस हिसाब से सूर्य के मध्य भाग का पदार्थ एक घंटे में सवा सात हजार किलोमीटर की दूरी पूरी करता है।

सूर्य की मध्य रेखा से इसके ध्रुवों के पदार्थों का परिभ्रमण काल अधिक होता जाता है। ३० अंश अक्षांश के पदार्थों का परिभ्रमण काल २६ दिन है और ध्रुवों पर ३५ दिन। सूर्य पृथ्वी की कक्षा के तल से ७ अंश का कोण बनाकर घूमता है। सूर्य के गैसों के पिंडों के ऊपर और अन्दरूणी भागों की चाल में भी अन्तर होता है। सूर्य केवल अपने अक्ष के ही इर्द-गिर्द ही नहीं घूमता। जिस प्रकार सूर्य के ग्रह व उपग्रह सौर मण्डल के सदस्य हैं, उसी प्रकार सूर्य भी

हैं। हमारे विश्व का आकार भी मकिल हो है। यदि इसे किनारे की ओर से देखें तो तश्तरी नुमा दिखता है, जिसका बीच का भाग उभरा हुआ है। यह उभार परिणाम में १०-१५ प्रकाश वर्ष है। सूर्य इस तश्तरी केन्द्र से लगभग ३० हजार प्रकाश वर्ष है। इसकी मध्य रेखा से सूर्य लगभग १०० प्रकाश वर्ष दूर हटा हुआ है।

जिस विश्व में सूर्य का स्थान है, उसमें सूर्य के आस-पास १५-१६ प्रकाश वर्ष के व्यास में ५० अन्य तारक हैं। इन तारकों का एक पुंज हैं। इस पुंज में सूर्य का निकटतम तारक 'अल्फा सोटाउरी है, जो सवा चार प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। 'सीरियस' लगभग ८ प्रकाश वर्ष की दूरी पर हैं। यदि 'सीरियस' पृथ्वी से उतनी ही दूरी पर होता, जितनी दूरी पर सूर्य है, तो यह सूर्य से २७ गुना चमकीला दिखता। इसके अतिरिक्त एक तारक 'रीगन' है, जो सूर्य से १४००० गुना चमकीला है। इनमे बहुत से तारे ऐसे भी हैं जो सूर्य से बहुत कम चमकीले हैं। 'वोनार्ड' तारक सूर्य से ढाई हजार गुना कम चमकीला है। वह आकार में भी सूर्य से छोटा है। इसका व्यास सूर्य के व्यास से ५ गुना कम है। 'एँतारे' का व्यास सूर्य से ४८० गुना

बड़ा है। इसका वजन सूर्य से ३० गुना है। इसक
पदार्थ सूर्य के पदार्थ से लाखों गुना हलका है।

आकाश-गंगा—सूर्य जिस तारक पुंज का सदस्
है, उसमें तथा उसके आस-पास में लगभग १०० पुं
हैं। इसके अतिरिक्त करोड़ों अकेले तारक भी हैं
इन सभी को एक शृंखला में बांधने वाली धारा क
वैज्ञानिक आकाश-गंगा कहते हैं। अंधेरी रात
आकाश पर ध्यान से दृष्टि डालें तो कुछ छुट-पुट ता
तथा कुछ झुंड एक पट्टी में गुथे दिखाई देंगे। पश्चिम
विद्वान इसे दुग्ध-गंगा (मिल्की वे) कहते हैं। यह
आकाश-गंगा हमारा सम्पूर्ण विश्व हैं, जो अंतरिक्ष मे
एक लट्टू के समान घूम रहा है। इसके सभी तारक
सक्रिय हैं जो तारक केन्द्र से जितनी दूरी पर है उसकी
गति उतनी ही तीव्र है। इस विश्व की कीली के
चारों ओर चक्कर लगाने में सूर्य को २५ करोड़ वर्ष
लगते हैं।

आकाश-गंगा को देखने से लगता है कि ये सितारे
आपस में सटे हुए हैं। परन्तु वास्तविकता यह है कि
ये एक-दूसरे से काफी-काफी दूर के फासले पर हैं।
न तारकों के बीच में बहुत बड़ा शून्य है। इन शून्य
: कुछ गैसों के बादल तथा कुछ तारक-रज (स्टेल

डस्ट) फैली है। ये तारक-रज और गैसें गतिशील विश्व मे स्वच्छन्द विहार करते रहते है। ये कभी-कभी विश्व के तारकों को इस प्रकार ढक लेते हैं जैसे रात्रि में बादल तारों को ढक लेते हैं। वैज्ञानिकों का मत है कि ब्रह्माण्ड रबर के गुब्बारे के समान फैलता जा रहा है। इस फैलाव के कारण विश्व परस्पर एक-दूसरे से दूर होता जा रहा है।

सूर्य का जन्म—वैज्ञानिको का मत है कि पृथ्वी को सूर्य ने जन्म दिया। अब प्रश्न यह उठता है कि सूर्य को किसने जन्म दिया ? इस पर भी वैज्ञानिकों ने विचार किया है। उनका मत है कि सूर्य और उसी के समान अन्य तारक गैसों के उन बादलों से जन्मे जो अंतरिक्ष में घूमते फिरते है। ये बादल जहां सघन हो जाते हैं और गैसीय कणो का आकर्षण बढ़ जाता है। आरम्भ मे बादल का व्यास लगभग एक हजार 'प्रकाश वर्ष' होता है। फिर यह सिकुड़कर एक काला धब्बा सा बन सकता है। उसे वैज्ञानिक प्रतारक (प्रोटोस्टार) कहते हैं। फिर यह इतना गर्म हो जाता है कि इससे प्रकाश निकलने लगता है। यह प्रकाश उसके बाहर के भाग के धुंधलेपन को समाप्त कर देता है। उस स्थिति में प्रतारक को तारक की संज्ञा दी

जाती है। वैज्ञानिकों के विचार से सूर्य का जन्म भी कुछ-कुछ इसी प्रकार हुआ होगा।

वैज्ञानिकों ने यह मत अवश्य बना लिया है, परन्तु गणित, गणना और तर्क के आधार पर सोचें तो उक्त मान्यता तभी सम्भव हो सकती है, जब गैस के बादल में इतना पदार्थ हो जितना एक हजार सूर्यों में होता है। इस दृष्टि से यह तभी सम्भव है जब सूर्य का विघटन होकर इस रूप में आया हो। हम ऊपर कह चुके हैं कि सूर्य लगभग ५० ग्रहों के पुंज का सदस्य है। सम्भव है ये सभी ग्रह सूर्य के विघटन स्वरूप अस्तित्व में आए हों। वैज्ञानिकों का मत है कि तारक में चमक आने के पश्चात भी उनका सिकुड़ना रुकता नहीं। इस सिकुड़ने से तारक का तापमान और चमक और बढ़ जाते है। तारक के जीवन का अधिकांश भाग इसी रूप में रहता है। सूर्य का इस समय केवल यही रूप है।

ताप-ईंधन समाप्त होने पर—करोड़ों अरबों व तक ताप और प्रकाश वितरित करते-करते जब तारक अन्दर का ईंधन समाप्त होने लगता है तो बहुत ... का ताप और प्रकाश कम हो जाता है। उ... उनके सिकुड़ने की गति तीव्र हो जाती है। बी...

बीच में यह तारक अधिक भी चमक उठता है परन्तु उसके बाद फिर सिकुड़ने लगता है। अन्त में वह एक छोटे तारे के रूप में चमकता रह जाता है। इस स्थिति में उसे श्वेत वाम (ह्वाइट ड्वार्फ) कहते हैं। फिर उसकी सफेदी पीली, लाल होकर काली पड़ जाती है। फिर वह दिखाई नही देता। कभी-कभी वह चमकीले बादलो के मध्य काला धब्बा सा दिखाई दे जाता है। इस लम्बे क्रम में खरबों वर्ष का समय लग जाता है।

तारक के ग्रह—अभी यह अनुमान ही है कि ग्रह और उपग्रह तारक के शरीर से पैदा होते हैं। सौर परिवार का अध्ययन करने पर जो परिणाम सामने आए हैं उससे यह तथ्य प्रमाणित होता है। इसका मुख्य परिणाम यह है कि सूर्य परिवार के ग्रह अपने अक्ष पर घूमते हुए सूर्य के इर्द-गिर्द एक ही दिशा मे घूमते है। दूसरी बात यह कि इन सब ग्रहों की कक्षाओं का धरातल समान है। इससे सिद्ध होता है कि आरम्भ में ये सब ग्रह एक ही पिण्ड के अंग थे। इन ग्रहो में सबसे बड़ा पिंड सूर्य है। इसलिए ये सब सूर्य से जन्मे। जर्मन दार्शनिक कण्ट ने सन् १७५५ मे सर्वप्रथम यह विचार सामने रखा। उसके पश्चात फ्रान्स के गणितज्ञ लाप्लास ने इसका समर्थन किया।

इसके पश्चात मोल्टन और चेम्बरलेन ने कहा कि जब सूर्य विकास की अवस्था में था तो एक अन्य तारक उसके पास से गुजरा। उसके आकर्षण से सूर्य का कुछ भाग टूट कर सूर्य के गिर्द घूमने लगा। परन्तु गणितज्ञ एडिंग्टन ने इस मत का खंडन करके कहा कि दो तारक इस प्रकार निकट से नहीं गुजर सकते। फिर जेम्सजिन ने सिद्ध किया कि ऐसी घटना दो अरब वर्ष पूर्व घट चुकी है। कुछ भी हो, वर्तमान मान्यता यही है कि ये ग्रह सूर्य के ही खण्ड हैं।

सूर्य और पृथ्वी

जलवायु पर प्रभाव—प्राचीन ज्योतिषी सूर्य, चन्द्र तथा अन्य ग्रहों को मनुष्य का भाग्य निर्माता मानते थे। फिर वैज्ञानिकों ने इन्हें निर्जीव पिण्ड कहकर इस विचार को मूर्खतापूर्ण कहना आरम्भ कर दिया। परन्तु अब विश्व के प्रमुख वैज्ञानिक यह मानते है कि चाहें अन्य ग्रहों का न सही, सूर्य में घटने वाली हल-चलों का पृथ्वी के विभिन्न व्यापारों पर सीधा प्रभाव सूर्य के उन सूक्ष्म कणों और पराकाशी किरणों के कारण होता है जो फ्लेयर और प्रामिनेंस सूर्य की ज्वालाओं से निकलकर पृथ्वी की ओर आती हैं। सूर्य के कलंक पृथ्वी के जलवायु पर असर डालते हैं।

सूर्य के कलंकों में वृद्धि होने पर समुद्र के पानी में अधिक भाप उठती है, अधिक बादल बनते हैं। और अधिक वर्षा होती है। गर्मी की अधिकता से ध्रुवों का बर्फ पिघलता है। इससे तटवर्ती स्थानों के

तापमान बदलते हैं।

वनस्पतियों पर प्रभाव--जलवायु और वर्षा इत्यादि का पृथ्वी पर उगने वाली वनस्पतियों पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। इससे अनाज के उत्पादन में वृद्धि होती है। जेवन्स नामक अर्थशास्त्री ने सन् १८७८ में निष्कर्ष निकाला था कि समूची अर्थ व्यवस्था पर सूर्य-कलंकों के अनुरूप ११ वर्षीय चक्र देखा गया है। माटा और शेफर नामक अर्थशास्त्रियों ने भी सूर्य कलंकों की संख्या और मानवीय व्यवहार के बीच सम्बन्ध स्थापित किया है। रूसी विद्वान् ट्चेविस्की ने सन १९३० में कहा था कि ज्यों-ज्यों सूर्य-कलंकों में वृद्धि होती है त्यों-त्यों युद्ध के मोर्चे पर गर्मी आती है। विचारकों का मत है कि संसार की सभी महान् घटनाओं का सम्बन्ध सूर्य के कलंकों की अधिक संख्या से है। सन् १९४७ में सूर्य के कलंकों की सीमा सबसे अधिक थी तो उसी वर्ष भारत स्वतंत्र हुआ। उसके पश्चात कुछ विद्वानों ने विश्व की प्रमुख घटनाओं पर दृष्टि डाली तो पाया कि वे उन्हीं दिनों में घटीं जब सूर्य के कलंकों में वृद्धि हुई। फिर भी वैज्ञानिक इस स्वरूप को पूरी तरह नहीं स्वीकारते क्योंकि ये विज्ञान बाहर की बातें हैं।

का गोला
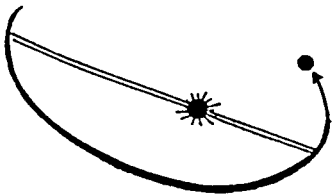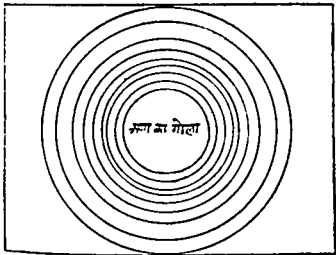
रेडियो तरंगों पर प्रभाव—जिस समय सूर्य में कलंक उत्पन्न होते हैं तो उज्ज्वालाएं प्रकट होती है और रेडियो प्रसारण में बाधा उपस्थित होती है। फिर एक दो दिन पश्चात यह बाधा स्वयं ही दूर हो जाती है। यह इसलिए होता है क्योंकि रेडियो तरंग प्रकाश तरंगों की तरह सीधी चलती है। रेडियो तरंगों के दो तीन हजार कि० मी० की दूरी पर पहुंचने पर गोलाई बीच में आ जाती है। इस कठिनाई का हल ऊंचाई पर फैले विद्युत कण की परतें प्रस्तुत करती है। इन परतों का निर्माण सूर्य की पराकाशी किरणों से होता है, परन्तु जब सूर्य पर कोई फ्लेयर या प्रोमिनेंस उत्पन्न होती है तो उनके कण या किरणें पृथ्वी की दिशा में आती है और रेडियो तरंगों के सरल प्रवाह में बाधा बन जाती हैं। इससे रेडियो प्रसारण एक-सा हो जाता है। दूर देशों के प्रसारण को सुन पाना तो सम्भव ही नहीं रहता। इस दृष्टि से रेडियो प्रसारण कर्ताओं को सूर्य के कलंकों पर ध्यान रखना आवश्यक है। संसार की लगभग ४० प्रयोगशालाएं निरन्तर सूर्य के इन कलंकों के आंकड़े एकत्रित करती रहती है। इन आंकड़ों से उनके भावी प्रभाव का ज्ञान बना रहता है, जिससे रेडियो संचार की पहले से व्यवस्था कर ली

जाए। इसके तरीके वैज्ञानिकों ने खोज निकाले हैं।

पृथ्वी एक विशाल चुम्बक—रेडियो प्रसारणों में गड़बड़ होने के समय ध्रुवी प्रदेशों के आकाश में रंग-बिरंगी प्रकाश-यवनिकाएं दिखाई पड़ती है। ये मेरु ज्योतियां (ऑरोरल लाइट्स) कहलाती है। जब ये मेरु ज्योतियां झूमती हैं और रेडियो प्रसारणों में विघ्न पड़ता है तो पृथ्वी की चुम्बक-शक्ति में तीव्र कम्पन आरम्भ हो जाता है। इसी समय पृथ्वी पर तीव्र गति से सूक्ष्म कण अवतरित होते हैं। इन्हीं के कारण एक बार इंग्लैण्ड और अमरीका के बीच के समुद्री तार जल गए थे।

पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति इसके वायुमंडल में व्याप्त है। यह वायुमंडल धीरे-धीरे विरल होकर अंतरिक्ष में लीन हो जाता है। इस वायुमंडल की कोई निश्चित रेखा नहीं है। फिर भी इसकी दूरी ११०० कि० मी० तक मापी गई है। इस प्रकार के एक व्यास का अनुमान सूर्य के चारों ओर किया गया है जिसकी दूरी १४ लाख किलोमीटर अनुमान की गई है। भू-उपग्रहों ने अनुमान लगाया है कि इन दोनों के बीच एक पुलिया-सी है। सूर्य की मेखलाओं के सिर सींगों के समान हैं जो पृथ्वी की ओर झुके हैं।

विकिरण मेखलाएं (रेडियेशन बेल्टस)—१०-१५ वर्ष पूर्व तक माना जाता था कि सूर्य और पृथ्वी के बीच करोड़ों कि० मी० का बहुत बड़ा शून्य है, परन्तु अब विकिरण मेखलाओं के आविष्कार ने यह सिद्ध कर दिया कि इस बीच एक चुम्बक मण्डल (मैगनेटोस्फियर) है। विकिरण मेखलाएं उसी का एक भाग हैं। किसी ग्रह की ओर यान भेजने से पूर्व इन विकिरण मेखलाओं का ज्ञान प्राप्त करना बहुत आवश्यक होता है।

चन्द्रमा पर मानव का जाना—चन्द्रमा पर इंसान के भेजन से पूर्व चन्द्रमा और पृथ्वी के बीच की विकिरण मेखलाओं का ज्ञान प्राप्त किया ही गया, साथ ही उपग्रह के धरातल की भी पूरी जानकारी प्राप्त की गई। पहले उसकी प्रदक्षिणा करके निकट से उसके फोटो लिए गए, फिर उस पर ऐसे उपग्रह भेजे गए जिन्होंने धरातल पर उतर कर वहां की अवस्था के आंकड़े भेजे और उसके पश्चात मनुष्य को चांद पर उतारा गया।

क्या मनुष्य सूर्य पर भी जा सकता है ?—ऊपर हम सूय के विषय में जो जानकारी प्रस्तुत कर चुके हैं, ... समझकर यही कहना उचित होगा कि सूर्य पर

मनुष्य सशरीर नहीं जा सकता। सूर्य का धरातल चन्द्रमा के समान ठोस न होकर गैसीय है। फिर वह गर्म इतना है कि मनुष्य इससे लाखों कि० मी० से ही झुलसना शुरू हो जाएगा। उसके निकट जाकर पृथ्वी का हर पदार्थ जलकर भस्म हो जाएगा।

सूर्य-ग्रहण

पृथ्वी पर से देखने से हमें सूर्य और चन्द्रमा लगभग समान आकार के दिखाई देते हैं। इसका कारण इनकी दूरी का अन्तर है। सूर्य पृथ्वी से १४ करोड़ ९५ लाख कि० मी० तथा चन्द्रमा ३ लाख ८४ हजार ४०० कि० मी० दूर है।

चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता हुआ कभी-कभी सूर्य और पृथ्वी के बीच में आ जाता है। ऐसी स्थिति में सूर्य का कुछ बिम्ब उससे ढक जाता है। इसे सूर्य-ग्रहण कहा जाता है। जब वह पूरी तरह बीच में आकर सूर्य को पूरी तरह ढंक लेता है तो उसे पूर्ण सूर्य ग्रहण कहते हैं।

...चक कथा—एक बार समुद्र का मंथन ...। उसमें से अमृतघट निकला। वह दानवों ...। उस समय विष्णु एक सुन्दर स्त्री का ...कर राक्षसों के पास गए और उन्हें मोहित

करके अमृत-घट प्राप्त कर लिया। जब उन्होंने वह अमृत देवों को पिलाना आरम्भ किया और इसका राहु को पता चला तो वह भी वेष बदलकर उनकी पंक्ति में जा बैठा और अमृत पी गया। सूर्य और चन्द्रमा को इस बात का पता चला तो उन्होंने विष्णु से जाकर उसकी शिकायत की और विष्णु भगवान ने राहु का सिर काट दिया, परन्तु वह मरा नहीं, क्योंकि अमृत पान कर चुका था। तब से वह सूर्य और चन्द्रमा का शत्रु हो गया और अब जब भी उसे अवसर मिलता है तो वह उन्हें ग्रस लेता है, और सूर्य तथा चन्द्र-ग्रहण पड़ते हैं।

चीन में प्रचलित कथा—चीन के राजाओं का विश्वास था कि सूर्य-ग्रहण दैविक प्रकोप का फल है। जब कोई राक्षस सूर्य पर हमला करता है तो ग्रहण पड़ता है और वह राजवंश के अनर्थ का सूचक होता है। उन्हें उनके पुरोहितों ने विश्वास दिला रखा था कि उनके पास ऐसी दैविक शक्ति है जो अनर्थ से उनकी रक्षा कर सकती है।

ग्रहण का अनुमान—सूर्य और सूर्य के ग्रह तथा उपग्रह सब गतिशील हैं। इन घूमने में जब चन्द्रमा पृथ्वी और सूर्य के बीच में आ जाता है तो सूर्य-ग्रहण

प्रकाश की तुलना में बहुत क्षीण होता है, लाखों भाग से भी कम। फिर भी वह पूर्णिमा के चांद से चमकीला होता है।

सूर्य-किरीट का यह रूप समय-समय पर बदलता रहता है कभी-कभी इसका फैलाव बहुत दूर तक बढ़ जाता है। जब चांद थोड़ा और आगे बढता है तो किरीट के मूल में से लाल रंग का कंगन-सा दिखाई देता है। जब यह वर्ण-मण्डल पूरी तरह बाहर आ जाता है तो इसकी गहराई १५,००० किलोमीटर के लगभग होती है। इस गहराई में से लाल रंग की चिनगारियां-सी छूटती दिखती है। ये चिगारियां तीन-चार मिनट तक ऊपर की ओर उठकर वापस लौटने लगती हैं। चांद जब थोड़ा और आगे बढ़ता है तो सूर्य का धरातल अपना पूरा प्रकाश फैलाने लगता है। सूर्य का यह धरातल प्रभा-मंडल कहलाता है।

वर्ण-मण्डल—वर्ण-मण्डल से सूर्य की चुम्बकीय क्रियाओं के कारण चिंगारियां तेजी से निकल भागती हैं, परन्तु यह भाग उसकी सीमा तक ही होती है। फिर यह अपनी शक्ति ऊपरी भाग को सौंपकर शान्त हो जाती हैं। इसके शान्त हो जाने पर ऊपरी भाग के कणों की गति और तापमान में बढ़ोतरी हो जाती

है। इन कणों की यह उछल-कूद कभी-कभी किरीट तक भी जा पहुंचती है, जिससे उसका भी तापमान बढ़ जाता है। इसी प्रकार की क्रियाओं से प्रभा-मण्डल के तीव्र कण वर्ण-मण्डल की ओर दौड़ भाग करते रहते हैं और उनसे वर्ण-मण्डल के तापमान में बढ़ोतरी होती है।

प्रभा-मण्डल—प्रभा-मण्डल सूर्य का सबसे प्रकाशमान और शक्तिशाली भाग है। यह भाग किरीट और वर्ण-मण्डल के ही अध्ययन में बाधा उपस्थित नहीं करने देता, वरन् अपना भी सही रूप समझने में बाधा डालता है। इसके अध्ययन के लिए वैज्ञानिकों ने इसके प्रकाश को कम करके देखने का प्रयास किया है। इसके लिए रंगीन कांच लगाकर दूरबीन का प्रयोग किया है। इस प्रयोग में प्रभा-मण्डल का आकार लड्डुओं के रूपमें सामने आया। इससे पूर्व प्रभा-मण्डल को समतल गोला माना जाता था। ये लड्डू परस्पर सटे हुए हैं। ये टिमटिमाते रहते हैं। और जलते-बुझते भी हैं। प्रभा-मण्डल में ऐसे करोड़ों लड्डू हैं। यह प्रभा-मण्डल लगभग ३०० किलोमीटर गहरा है। इसकी गहराई की सीमा में सूर्य के पदार्थ के लक्षण समान हैं। अन्तर मात्र यही है कि इसके अन्दर का भाग सूर्य से अधिक प्रदीप्त होता है।

सूर्य के कलंक

गैलीलियो की यह बात तो तत्कालीन वैज्ञानिकों ने मान ली कि पृथ्वी, चांद तथा अन्य ग्रह सूर्य के गिर्द चक्कर लगाते हैं परन्तु जब उसने सूर्य में कलंक होने की बात कही तो गिर्जे के पादरियों ने उस पर मुकदमा चला दिया। उस मुकदमे में वह जेल से तो छूट गया, परन्तु अपने गांव के घर में उसे नजरवन्द रहना पड़ा और वहीं उसका सूना जीवन व्यतीत हुआ। उसने १६१० में अपने दूरदर्शक से सूर्य का निरीक्षण करके उसमें धब्बे देखे थे। जब उसने इस तथ्य की घोषणा की तो विद्वानों ने चकित होकर कहा, "कैसी बेतुकी बात कहता है गैलीलियो। सूर्य में कलंक!"

पूर्व-उल्लेख—सूर्य के कलंक का उल्लेख हमें ऋग्वेद में भी मिलता है। चीन के ३ हजार वर्ष पुराने एक ग्रन्थ में भी सूर्य-कलंक का जिक्र है। इसका अर्थ स्पष्ट है कि गैलीलियो से पूर्व भी कुछ विद्वान इन

कलंकों को देख चुके थे, परन्तु उनके पास गैलीलियो जैसा दूरदर्शक नहीं था।

जब इनके होने का संशय समाप्त हो गया तो वैज्ञानिकों ने इनके स्वभाव की जानकारी प्राप्त करने की दिशा में खोज आरम्भ की। आरम्भ में विचारकों और वैज्ञानिकों का विचार बना कि ये कलंक सूर्य के अन्दर न हों, उन कुछ रुकावटों के कारण दिखते हैं जो सूर्य और पृथ्वी के मध्य उपस्थित हैं। वे इन्हें कोई अप्रकाशित ग्रह, उपग्रह अथवा गैसीय बादल समझते रहे। परन्तु गैलीलियो ने स्पष्ट घोषणा की कि वे कलंक कोई बीच की रुकावट न होकर सूर्य के अपने ही भाग हैं।

सूर्य के कलंक—एक विद्वान् ने अपना मत व्यक्त किया कि जिस प्रकार दीपक की बत्ती जल जाने पर उसका अग्र भाग काला पड़ जाने पर काट दिया जाता और बत्ती फिर पूर्ण प्रकाश से जल उठती है, उसी प्रकार ये कलंक सूर्य के कतर कर फेंके अंश है, परन्तु सच यह है कि आज तक का विकसित विज्ञान भी इनकी निश्चित जानकारी प्राप्त नहीं कर पाया। ये कलंक सूर्य परिभ्रमण के समय भी उसके साथ-साथ घूमते हैं। इन्हीं की सहायता से सूर्य की परिभ्रमण

अवधि का अनुमान लगाया गया। ये कलंक सूर्य के अन्दर थोड़ा सरकते भी रहते हैं। ये मध्य रेखा की ओर सरकते हैं। इस सरकन में मध्य रेखा के निकट जाने से पूर्व या वहां पहुंचकर इनका लोप हो जाता है। उत्तरी गोलार्ध के कलंक दक्षिणी गोलार्ध में प्रवेश करते हुए नहीं देखे गए। इसी प्रकार दक्षिणी गोलार्ध के कलंक भी उत्तरी गोलार्ध में प्रवेश करते अब तक दिखाई नहीं दिए।

इन कलंकों का उतार-चढाव नियमबद्ध है। समय के साथ-साथ पहले इन कलंकों की संख्या चरम सीमा को पहुंचती है और फिर घटने लगती है। कलंकों के इस उतार-चढ़ाव के चक्र की अवधि ११ वर्ष की मानी जाती है। ऐसे चक्र के आरम्भ में दोनों गोलार्धों में छोटे-छोटे कलंक दिखते हैं, फिर इनकी संख्या बढ़ने लगती है और ये मध्य रेखा की ओर सरकने लगते हैं। कलंकों की संख्या का यह विस्तार चार वर्ष तक बढ़ता जाता है और फिर कम होने लगता है। इनके सरकने की दिशा में कोई अन्तर नहीं आता। लगभग ११ वर्ष पश्चात ये कलंक मध्य रेखा के निकट आकर लुप्त होने लगते हैं।

कलंकों की इस गतिविधि से वैज्ञानिकों ने अनुमान

लगाया कि इन कलंकों का रूप विभिन्न प्रकार का है और उनके विस्तार में भी अन्तर है। ये दोनों प्रकार के हैं। इनकी आयु कुछ घंटों से लेकर कुछ महीनों तक की होती है वैज्ञानिकों ने जो सबसे लम्बी आयु का कलंक नोट किया है उसकी आयु १८ मास थी। इनका व्यास ७-८ कि० मी० से ७०-८० हजार कि० मी० तक होता है। अप्रैल १९४७ में एक कलंक का क्षेत्रफल १६ अरब कि० मी० आंका गया था। जिसमें १०० पृथ्वी जैसे गृह समा सकते थे। इस अकेले कलंक का प्रकाश पूर्णिमा के हजार चन्द्रमाओं के समान था। इन कलंकों का कालापन सापेक्ष है। वे केवल सूर्य के प्रभामण्डल की तुलना में ही काले हैं, जैसे साधारणत. उनका प्रकाश चन्द्रमा से ५० गुना अधिक है।

कलंकों का तापमान—लोहे को गर्म करने पर पहले उसका रंग भूरा लाल, फिर उजला लाल, फिर केसरी, फिर पीला-बसन्ती और अन्त में ज्वलंत श्वेत होगा। यही अन्तर प्रभा-मण्डल और सूर्य-कलंकों में है। जहां सूर्य के सामान्य धरातल का तापमान ६००० अंश सेण्टीग्रेड होता है वहां उपछाया का ५०० अंश कम और प्रच्छाया का १००० अंश कम। इस प्र

कलंकों का तापमान भी ५००० सेण्टीग्रेड से कम नहीं होता। अणु विस्फोटों से पूर्व इतना तापमान पृथ्वी पर मिलना दुर्लभ था।

कलंकों में ववण्डर—अमरीकी वैज्ञानिक हेल ने खोज की कि इन कलंकों में विशाल ववण्डर उठते हैं और आंधियां चलती है इनमें चुम्बको के क्षेत्र हैं। चुम्बक लोहे को अपनी ओर खींचते है। कलंकों की चुम्बकीय शक्ति पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति से १०-१५ गुनी अधिक है। यह शक्ति सब कलंकों में समान नहीं हैं। नए कलंकों में यह शक्ति अधिक है। इन कलकों के नष्ट होते समय इनकी यह शक्ति नष्ट हो जाती है। ये ववंडर, और आंधियां इसी चुम्बकीय शक्ति के कारण आती हैं।

कलंकों का स्वभाव—जब दो कलंक एक-दूसरे के निकट आते हैं तो एक का स्वभाव दक्षिणी ध्रुव के समान और दूसरे का उत्तरी ध्रुव के समान होता है। यह भी देखा गया है कि यदि एक गोलार्ध में एक कलंक होता है तो दूसरे गोलार्ध में भी उसके सामने एक कलक होता है। इनके क्षेत्रफल मे अन्तर हो सकता है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने इनके विषय में अब और जानकारियां प्राप्त कर ली है।

सूर्य की उज्ज्वालाएं

फंकुले—सूर्य में कलंकों के उत्पन्न होने से कुछ उज्ज्वल बादल से प्रकट होते हैं जो फंकुले कहलाते हैं। जब कोई कलंक लुप्त होता है तो उसके पश्चात भी उस स्थल पर फंकुले दृष्टिगोचर होते है। ये फंकुले उद्जन (हाइड्रोजन) और कैलशियम तत्वों से सूर्य अभ्यन्तर के किसी क्षोभ के कारण तप्त चमकीले बादलों के रूप में उभरते हैं। इनका विस्तार कलंकों के विकास के अनुसार घटता बढ़ता रहता है।

उज्ज्वालाएं—सूर्य के कलंकों के ऊपर फुलझड़ियां-सी छूटती प्रतीत होती हैं। यह एक आलोक का जमाव होता है जो कुछ-कुछ क्षण पश्चात फूट निकलता है। इसकी चमक अनेकों गुना बढ़ जाती है। इसका विस्तार डेढ़ लाख कि० मी० तक फैल जाता है। इसे उज्ज्वाला (फ्लेयर) कहते हैं। जैसे धरती के बादलों में बिजली कौंधती है। वैसे ही फंकुले बादलों

से आच्छादित क्षेत्र पर उज्ज्वालाएं चमकती हैं। अन्तर यह है कि धरती के बादलों की चमक क्षणिक होती है और इनको कुछ मिनटों से घण्टों तक बनी रहती है। हर कलंक के पास एक दिन में एक बड़ी उज्ज्वाला अवश्य कौंधती है। छोटी उज्ज्वालाएं तो निरन्तर कौंधती ही रहती हैं। कई बार इनकी संख्या एक दिन में सैकड़ों से अधिक हो जाती है। ये उज्ज्वालाएं दो कलंकों के बीच कौंधती हैं और इनकी लम्बाई हजारों कि० मी० तक हो जाती है।

पृथ्वी पर प्रभाव—ये उज्ज्वालाएं अपने विकास के दौरान लाखों कि० मी० प्रति घण्टे की गति से अपनी किरणें छितराती हुई पृथ्वी की दिशा में दौड़ती हैं और पृथ्वी को अपनी लपेट में ले लेती है। इनका लेखा-जोखा रखने के लिए विभिन्न देशों की प्रयोग-शालाओं में स्वचालित यंत्र लगे हैं। ज्यों-ज्यों सूर्य के धरातल पर कलंकों की संख्या बढ़ती है इन उज्ज्वा-लाओं की संख्या भी बढ़ती जाती है। कभी-कभी कलंकों के निकट विशाल भूरे नाग से दिखाई देते हैं। इन नागों के स्थान और तूल में परिवर्तन होता रहता है। दो तीन सप्ताह पश्चात इनकी स्थिति में निश्चितता आ जाती है। इन्हें तंतुक कहते है।

ज्वालाएं—सूर्य के घूमने पर जब ये तंतुक उसके सिरे पर पहुंच जाते हैं तो लाल रंग की ज्वालाओं से प्रतीत होते हैं। इन ज्वालाओं को पहले से पृथक वस्तु माना जाता था क्योंकि इनका रंग लाल और तंतुओं का सफेद होता है। अब वैज्ञानिकों का मत है कि यह अन्तर पृष्ठभूमि का है वस्तु का नहीं। जो तंतुक नीले आकाश में लाल दिखते हैं। वही सूर्य के धरातल पर सफेद नजर आते हैं। जब ये तंतुक सूर्य के मध्य भाग पर प्रकट होते हैं तो केवल लम्बे दिखते हैं क्योंकि दृष्टि के सामने आकर इनका फैलाव नजर नहीं आता। ऊंचाई का आयाम सूर्य के सिरे पर पहुंचकर ही होता है। उस समय ये पर्वत के धरातल के पर्वत से प्रतीत होते हैं।

ज्वालाओं का रूप परिवर्तन—ये ज्वालाएं अपने विकास के दौरान रूप बदलती हैं। जब कलंक अस्त होते हैं तो फंकुले की चमक भी नष्ट हो जाती है, परन्तु तन्तुओं का विकास कई महीनों तक जारी रहता है। अन्त में यह ८-१० लाख कि० मी० तक फैल जाता है। वैज्ञानिकों ने दूर दर्शक में देखा है कि यह तंतुकों का विशाल अम्बर कभी-कभी सूर्य से हटकर अंतरिक्ष में विलीन हो जाता है और फिर उसी स्थान

विस्फोट
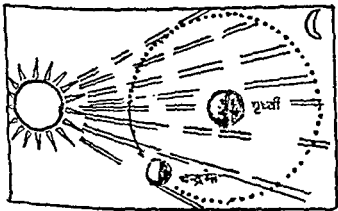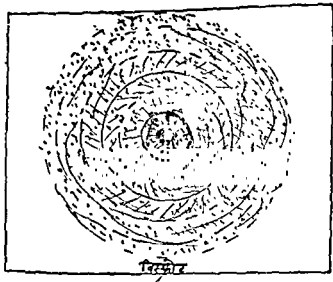
पर उनका झुंड बनने लगता है। सम्भवतः यह सूर्य की चुम्बकीय शक्ति के कारण होता है जो उन्हें फिर खींचकर अपने निकट ले आता है। इन ज्वालाओं की लपटों की ऊंचाई ७०-८० हजार कि० मी० तक मापी गई है। इन लपटों में पदार्थ की मात्रा बहुत कम होती है।

ज्वालाओं की गति—पृथ्वी पर सौ-सवा सौ कि० मी० की गति से आने वाले अन्धड़ को 'भीषण' या 'भयकर' कहा जाता है। यदि हम इन ज्वालाओं के विकिरण के दौरान उठने वाले अंधड़ की तुलना में इन्हें रखें तो ये नगण्य रह जाएंगे। वैज्ञानिकों ने उनकी गति लगभग ७०-८० कि० मी० प्रति सेकिण्ड मापा है। सूर्य में इस प्रकार के लाल फव्वारे आमतौर पर छूटते रहते हैं।

इन ज्वालाओं को साधारणतः देख पाना कठिन है। सूर्य और चन्द्र ग्रहणों के अवसरों पर, जब सूर्य का प्रकाश कट जाता है, तो इन ज्वालाओं की लपलपाती जीभे स्पष्ट दिखाई देती हैं। उस समय दूरदर्शक से इन्हें स्पष्ट देखा जा सकता है।

सूर्य का प्रकाश

सूर्य का प्रकाश वह मुख्य चीज है जिनकी जानकारी प्राप्त करना सूर्य को समझने के लिए नितान्त आवश्यक है। सूर्य का किरीट उसकी ज्वालाएं, उज्ज्वाले और कंकुले उसके प्रकाश के लक्षण मात्र हैं। पृथ्वी पर सूर्य के प्रकाश को उसकी गर्मी तथा उस प्रकाश के कारण जाना जाता है जिसको हम महसूस करते हैं या उसमें पदार्थों को देख पाते है। यह जानना सूर्य के प्रकाश के स्थूल रूप की जानकारी है। इससे सूर्य के मूल की जानकारी प्राप्त नही होती। उसकी पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए सूर्य के सूक्ष्म रूप को जानना आवश्यक है।

प्रकाश के विविध रंग—सर्व प्रथम न्यूटन ने यह सिद्ध किया कि सूर्य का जो प्रकाश हमें सफेद दीखता है उसमे वास्तव मे बैंगनी, आसमानी, नीला, हरा, पीला, नारंगी और लाल रंगों का सम्मिश्रण है। सृष्टि

में हमें जो भी रंग दिखते हैं वे सभी कुछ रंगों के मिश्रण हैं। इनमें मूल रंग कौन से हैं उसकी वैज्ञानिकों ने खोज की। वर्षों की खोज के पश्चात् वैज्ञानिकों ने निश्चय किया कि प्रकाश किरणें वास्तव में विविध रंगी किरणें हैं। साधारण दृष्टि से इनके न दिखने का कारण इनका छोटापन है। उदाहरण स्वरूप लाल रंग की १३,००० किरणें मिलकर एक सेण्टीमीटर बनती हैं और नीले रंग की २०,००० किरणें एक सेण्टीमीटर बनाती हैं। जब इन्हें बड़ी प्रयोगशालाओं में देखा गया ये सावधानी से तराशी हुई समानान्तर रेखाएं दिखाई दीं। इससे अलग-अलग रंगों को प्रथक-प्रथक देखा जा सका।

प्रकाश का विश्लेषण—इस विश्लेषण ने सिद्ध किया कि प्रकाश निश्चित नियमों के आधार पर उत्पन्न होता है। जैसे आग पर नमक डालें तो और रंग निकलेंगे, तांबे का चूर्ण छिड़कें तो और रंग, इसी प्रकार अन्य चूर्णों की स्थिति है। इस प्रकार का उल्लेख हमारी 'रसार्णव' पुस्तक में मिलता है।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने इन रंगों को लेकर प्रकाश विश्लेषण के तरीके खोजे। इसी से अंतरिक्ष में स्थिति ... की बनावट की जानकारी प्राप्त की। इससे

उनका निर्माण करने वाले तत्वों, उनके तापमान और घनता का भी पता लगाया जा सका। परमाणु विज्ञान की प्रगति ने यह भी जाना कि पदार्थ से प्रकाश कैसे और क्यों निकलता है।

प्रत्येक तत्व के परमाणु की एक निश्चित बनावट होती है। उसके केन्द्र में नामिक (न्यूकिलयस) नाम का कण होता है और उसके चारों ओर ऋणाणु (इलेक्ट्रान) घूमते रहते हैं। इनके घूमने की कक्षाएं हैं। सूर्य के गिर्द घूमने वाले ग्रहों की दशा भी इसी प्रकार की है। अन्तर मात्र यह है कि न्यूक्लियस के गिर्द घूमने वाले इलेक्ट्रान्स की कक्षाएं निश्चित नहीं है और ग्रहों की कक्षाएं निश्चित हैं। जो इलेक्ट्रान्स निकट घूमते हैं उन्हें कम और जो (दूर) घूमते है उन्हें अधिक ऊर्जा की आवश्यकता है। जब किसी पदार्थ को गर्म किया जाता है तो उसके इलेक्ट्रान शक्ति पाकर अपनी कक्षा से बाहर चले जाते हैं। इससे प्रकाश उत्पन्न होता है। इस प्रकाश के विश्लेपण से पदार्थ का ज्ञान होता है।

उद्‌जन और हैलिकम—वैज्ञानिकों के मतानुसार सूर्य में ये दो तत्व १० : १ के अनुपात में हैं। इन दो के अतिरिक्त ऑक्सीजन, कार्बन, नाइट्रोजन, सोडियम

लोहा, तांबा, एलूमीनियम इत्यादि भी सम्मिलित हैं। पृथ्वी के अनुपात में सूर्य के अन्दर उद्जन और हैलिकम अधिक मात्रा में है। अन्य पदार्थ उतनी अधिक मात्रा में नहीं हैं।

गुरुत्व—जो चीज जितनी अधिक भारी होती है, उसमें गुरुत्व शक्ति भी उतनी ही अधिक होती है। सूर्य पृथ्वी से बहुत अधिक भारी है। इसलिए उसमें पृथ्वी की अपेक्षा २७-२८ गुनी अधिक आकर्षण शक्ति है। सूर्य इसी आकर्षण शक्ति से हाइड्रोजन और हीलियम जैसे हलकी गैसों को अपने से बांधे रखता है, जब कि पृथ्वी इन्हें बराबर छोड़ती जा रही है। चांद पर वायुमंडल और आकर्षण-शक्ति न होने का भी यही एक कारण है कि वह पृथ्वी से बहुत ही हल्का ग्रह है।

प्रकाश में भिन्नता—सम्पूर्ण सूर्य की बनावट समान नहीं है। उसके सभी अंग प्रत्यंगों की बनावट में भेद है। कुछ पदार्थ यदि किरीट में हैं तो कुछ उज्ज्वालाओं में, कुछ प्रभा मण्डल में हैं तो कुछ कलकों में। इसी प्रकार पदार्थों की भिन्नता अन्य अंगों में भी है। इन अंगों से निकलने वाला प्रकाश भी इसीलिए परस्पर समानता नहीं रखता। इसीलिए प्रकाश के

स्वरूप में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। सूर्य की रासायनिक बनावट का ज्ञान सूर्य के वायुमण्डल से सम्बद्ध है। वायुमण्डल का निचला भाग इतना सघन है कि उससे उत्पन्न प्रकाश को जानना कठिन है। तप्त पदार्थों से भिन्न-भिन्न रंग निकलते हैं। यदि इन पर सफेद रंग पड़े तो ये उसके अन्दर अपने-अपने रंग का शोषण करने लगेंगे। यह बात गैस में अधिक स्पष्ट दीखती है।

सूर्य का वायु-मण्डल—सूर्य के प्रभा-मण्डल का प्रकाश जब सूर्य के वायु-मण्डल से होकर जाता है तो वह उसमें से कुछ किरणों को सोख लेता है। इससे वर्णपट्ट (स्पैक्ट्रम) उन सोखी गई किरणों के स्थानों पर काली रेखाएं बन जाती हैं। इन रेखाओं की खोज जर्मन वैज्ञानिक फ्रान हॉफर ने की थी। इन रेखाओं के द्वारा सूर्य के वायु-मण्डल की काफी जानकारी प्राप्त हुई है। इन रेखाओं में मात्र लोह तत्व की ४०,००० रेखाएं हैं। इनके अतिरिक्त अन्य धातुओं की भी अनेकों रेखाएं हैं। कुछ वर्ष पूर्व स्वर्ण की भी काली रेखाओं का अनुमान लगाया गया था।

सूर्य से ऐसी अन्य हजारों किरणें निकलती देखी गई हैं जिनका सम्बन्ध अभी किसी विशेष पदार्थ से

नहीं जोड़ा जा सका है। कुछ वैज्ञानिकों ने उन किरणों के आधार पर हीलियम (होलियो नामक नए पदार्थ का नामकरण भी कर डाला है। बाद की खोजों में इस पदार्थ के पृथ्वी पर भी निशान मिले हैं। किरीट में मिटने वाला हरा रंग जिस पदार्थ से निकलता है। वह भी पृथ्वी के ९२ तत्वों से भिन्न है। सम्भवत: यह हरा प्रकाश ऋणाणु वंचित याणुओं से उत्पन्न होता है, जो पृथ्वी पर नहो हैं।

किरणों का शोषण हितकर—सूर्य से निकलने वाली इन किरणों का उसके वायु मण्डल में शोषण हो जाना सम्भवत: पृथ्वी के जोवन के लिए हितकर ही है। यदि ये किरणें पृथ्वी पर अवतरित हो जातीं तो यहां के प्राणियों के शरीर पर फफोले पड़ जाते और वे झुलसकर रह जाते। वैसे धरती का वायु-मण्डल ऐसा है जो किरणों के बहुत बड़े प्रभाव को सोख लेता है।

परकाशनी किरणें—सूर्य के प्रकाश की जो किरणें सोख ली जाती है, उनमे परकाशनी किरणें सबसे महत्व-पूर्ण हैं। इनका शोषण ओजन नामक वायन परतों में होता है। इन परतों मे इन्हें सोखने की विलक्षण क्षमता है। पृथ्वी के वायु मण्डल की ये परतें लगभग ४० किलोमीटर ऊंचाई पर अवस्थित है। पिछले महा-

युद्ध के पश्चात् इन ओजन परतों की ओर लैस रॉकेट छोड़े। इन राकेटों ने लगभग १०० किलोमीटर ऊपर जाकर सूर्य की इन किरणों का परिचय प्राप्त किया। इन प्रयोगों से वर्ण मण्डल में उत्पन्न होने वाले प्रकाश का ज्ञान मिला, परन्तु इससे सूर्य के किसी नए तत्व का पता न चला।

एक्स किरणें—इन किरणों में वे एकल किरणें भी है जिनका प्रयोग शरीर के अन्दर का फोटो लेने में किया जाता है। ये अत्यन्त छोटी लम्बाई की किरणे होती हैं, परकाशी किरणों से भी छोटी। ये किरणें किरीट से आती हैं।१२ अक्टूबर १६५८ पूर्ण सूर्य ग्रहण के समय यह परीक्षण किया गया। जब चन्द्रमा ने प्रभा मण्डल औरवर्ण मण्डल को ढक लिया तो प्रकाश और परकाशी किरणें तो कट गईं परन्तु एक्स रेज बनी रहीं। इससे अनुमान लगाया गया कि ये किरणे किरीट से आती हैं, क्योंकि सूर्य का वही भाग अनढका रह गया था।

रेडियो तरंगें—एक अन्य प्रकार की लाल तरंगें, जो एक्सरेज से लम्बी होती है, रेडियो तरंगें कहलाती हैं। रेडियो तरंगों का प्रयोग आज समाचार प्रसारण में सर्वाधिक हो रहा है। सूर्य और चन्द्रमा के अन्दर उठने वाली तरंगे हमारी इन तरंगों से कहीं अधिक

शक्तिशाली हैं। वहां तार खम्भे नहींलगे हैं, परन्तु समाचार तो उनके प्राप्त होते ही रहते हैं। जैसे पानी के धरातल पर कंकड़ फेंकने से तरंगें पैदा होती हैं, उसी तरह किसी विद्युत प्रदेश में कोई बवण्डर आने पर विद्युत तरंगें चारों ओर को दौड़ने लगती हैं। सूर्य-प्रदेश में विद्यमान विद्युत और चुम्बक की चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं। उन्हीं में गड़बड़ होने पर रेडियो तरंगें उत्पन्न होती हैं।

सूर्य में ये तरंगें उसके जन्मकाल से वर्तमान हैं। हम लोग इन्हें बहुत बाद में समझ और जान पाए। सन् १८९३ में सर ऑलिवर लॉज ने इस विषय में विचार प्रकट किया। इसके ४० वर्ष पश्चात् अमरीकी वैज्ञानिक जैन्सकी ने इन किरणों को पकड़ने का दावा किया, परन्तु उसकी पुष्टि न हुई। उसके पश्चात सन् १९४८ में अमरीका के ही वैज्ञानिक साउथवर्थ ने सूर्य के रेडियो प्रसारण ग्रहण किए। उसके पश्चात इस दिशा में महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त की गई।

ये तरंगें अलग-अलग लम्बाई की होती हैं। एक रेडियो ट्रांसमीटर, एक निश्चित समय पर एक ही ।ई की तरंगें प्रसारित करता है, लेकिन सूर्य से ही समय में कई-कई लम्बाई की तरंगें निकलती

हैं। सूर्य से निकलने वाली सबसे छोटी तरंगें प्रभामण्डल से निकलती हैं। ज्यों-ज्यों इनकी दूरी बढ़ती जाती है, इनको लम्बाई भी बढ़ती जाती है। किरीट से ५ सेंटीमीटर से १ मीटर की रेडियो तरंगें निकलती हैं। किरीट के ऊपरी भाग से एक से पन्द्रह मीटर तक की तरंगें पैदा होती हैं। सम्भव है किरीट के निचले भाग से इससे भी लम्बी तरंगें पैदा होती हों, परन्तु इनमें से बहुतों को वायुमण्डल सोख लेता है।

छोटी तरंगों की संख्या कलंकों के घटने-बढ़ने के साथ घटती-बढ़ती रहती है। दस सेंटीमीटर की तरगों में यह नियम पूर्वक होता है। यहां तक की इनके आधार पर कलंकों की गिनती भी की जा सकती है।

तरंगों की बौछारें—कभी-कभी रेडियो तरंगों की बौछारें सी भी होती दृष्टिगोचर होती हैं और तूफान से भी आते दिखते हैं। बौछारों के समय इनकी संख्या हजारों गुनी बढ जाती है। ये अल्पजीवी बौछारें एक के बाद एक दिखाई देती हैं। और उनकी लम्बाई बढ़ती जाती है। एक बार ८ मार्च १९४७ को देखा गया कि डेढ़ मीटर की ३ मीटर और फिर वे ही तरंगें ५ मीटर तक लम्बी हो गईं। ये तरंगें लगभग

५०से ७५ हजार मीटर तक की ऊंचाई पर पैदा हुई। वैज्ञानिक इसे किसी भयंकर हलचल का कारण मानते हैं। इन बौछारों का सम्बन्ध कलंकों, ज्वालाओं, उज्जवालाओं इत्यादि से है।

दो दरवाजे—पृथ्वी के वायुमण्डल में सूर्य का प्रकाश और रेडियो तरंगों के आने के दो दरवाजे हैं। इनमें से प्रकाश के आने को तो बादल रोक सकता है, परन्तु रेडियो तरंगों को नहीं। इसीलिए जब बादल द्वारा प्रकाश का मार्ग अवरुद्ध कर दिया जाता है तब भी रेडियो तरंगें वैज्ञानिकों की सहायता करती रहती हैं। इसीलिए वर्षा आंधी और तूफान में भी रेडियो काम करते रहते हैं।

सूर्य की ऊर्जा

सूर्य की शक्ति—सूर्य पृथ्वी को जितनी ऊर्जा देता है और हम उसका उपयोग करते हैं, यदि यह हमें सूर्य से ना मिले और हम इसी अनुपात मे उसका पृथ्वी के साधनों से उपयोग करें तो तीन दिन में पृथ्वी का सब कोयला, लकड़ी, तेल, पेट्रोल और डीजल इत्यादि समाप्त हो जाएं। सूर्य हमें जितनी ऊर्जा देता है हम उसका पूरा उपयोग भी नहीं कर पाते। उसमें से आधी वायुमण्डल की ऊपरी सतह से ही प्रतिफलित होकर लौट जाती है, कुछ भाग वायुमण्डल सोख लेता है, और शेप हमारे काम आती है।

सूर्य की ५०० खरब कि० वाट शक्ति वनस्पति पर पड़ती है। इसका कुछ भाग पेड़ पौधों के काम आता है और शेप लौट जाता है। समुद्री वनस्पति के प्रयोग में हमारी फसलों की अपेक्षा आठ गुनी शक्ति काम मे आती है। इस शक्ति का बहुत बड़ा भाग

५०से ७५ हजार मीटर तक की ऊंचाई पर पैदा हुई। वैज्ञानिक इसे किसी भयंकर हलचल का कारण मानते हैं। इन बौछारों का सम्बन्ध कलंकों, ज्वालाओं, उज्जवालाओं इत्यादि से है।

दो दरवाजे—पृथ्वी के वायुमण्डल में सूर्य का प्रकाश और रेडियो तरंगों के आने के दो दरवाजे हैं। इनमें से प्रकाश के आने को तो बादल रोक सकता है, परन्तु रेडियो तरंगों को नहीं। इसीलिए जब बादल द्वारा प्रकाश का मार्ग अवरुद्ध कर दिया जाता है तब भी रेडियो तरंगें वैज्ञानिकों की सहायता करती रहती हैं। इसीलिए वर्षा आंधी और तूफान में भी रेडियो काम करते रहते हैं।

सूर्य की ऊर्जा

सूर्य की शक्ति—सूर्य पृथ्वी को जितनी ऊर्जा देता है और हम उसका उपयोग करते हैं, यदि यह हमें सूर्य से ना मिले और हम इसी अनुपात में उसका पृथ्वी के साधनों से उपयोग करें तो तीन दिन में पृथ्वी का सब कोयला, लकड़ी, तेल, पेट्रोल और डीजल इत्यादि समाप्त हो जाएं। सूर्य हमें जितनी ऊर्जा देता है हम उसका पूरा उपयोग भी नहीं कर पाते। उसमें से आधी वायुमण्डल की ऊपरी सतह से ही प्रतिफलित होकर लौट जाती है, कुछ भाग वायुमण्डल सोख लेता है, और शेष हमारे काम आती है।

सूर्य की ५०० खरब कि० वाट शक्ति वनस्पति पर पड़ती है। इसका कुछ भाग पेड़ पौधों के काम आता है और शेष लौट जाता है। समुद्री वनस्पति के प्रयोग में हमारी फसलों की अपेक्षा आठ गुनी शक्ति काम में आती है। इस शक्ति का बहुत बड़ा भाग

समुद्री पानी को गर्म करके भाप और बादल बनाने तथा वर्षा करने के काम में आता है। ये बादल पर्वतों पर पानी ले जाकर नदियों में बहाते हैं, जिनके वैज्ञानिकों ने बांध बनाकर बिजली घर बनाए हैं। परन्तु इसका भी हम पूरा लाभ नहीं उठा पाते। नदियों का अधिकांश पानी बहकर समुद्र में चला जाता है और सूर्य की संपूर्ण शक्ति व्यर्थ नष्ट हो जाती है।

इस संपूर्ण व्यापार को करने वाली विपुल सूर्य-शक्ति का एक नगण्य बाहरी भाग है, जो किरणों के रूप में सूर्य के चारों ओर प्रसारित होता रहता है। सूर्य की किरणें अपने केन्द्र बिन्दु से दूर हटकर वृत्त बनाती हैं और जब इस वृत्त का व्यास १५ करोड़ कि०मी० हो जाता है, तब यह पृथ्वी को छूता है। पृथ्वी का १२७५० कि०मी० व्यास इस शक्ति के दो अरब भागों में से केवल एक को ही ग्रहण कर पाता है। शेष शक्ति दूसरे ग्रहों में जाती है, या अंतरिक्ष में लय हो जाती है। यदि हम पृथ्वी पर गिरने वाली शक्ति का मूल्य केवल एक पैसा प्रति यूनिट मापें तो यह २० खरब रुपया प्रति दिन होगा।

जब सूर्य किरणों से वितरित शक्ति इतनी अधिक है तो उसकी वास्तविक शक्ति का अनुमान लगाना

सूर्य
पृथ्वी
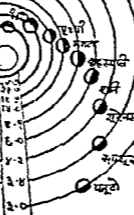
बहुत कठिन काम है।

शक्ति का स्रोत—सूर्य जिस परिमाण में शक्ति का प्रसारण करता है, उस गणना से प्रति घण्टे में सूर्य के संपूर्ण धरातल पर यदि पांच मीटर गहरी मिट्टी जलाई जाए और पूरा सूर्य कोयले का ही बना हो तो ६–७ हजार वर्ष में संपूर्ण सूर्य जलकर राख हो जाए। परन्तु सूर्य युग युगान्तर से इतनी ही शक्ति बिखराता आ रहा है और उसकी शक्ति में कोई अन्तर नहीं आया। इससे सिद्ध होता है कि सूर्य की शक्ति का स्रोत कोई अन्य ही है।

सौ वर्ष पूर्व हेल्म होल्टज जर्मन वैज्ञानिक तथा केल्विन नामक अंग्रेज वैज्ञानिक ने घोषणा की कि सूर्य सिकुड़ रहा है और इसी सिकुड़न से गर्मी पैदा होती है। उनका कथन था कि सूर्य प्रति वर्ष लगभग ७ मी० सिकुड़ जाता है, यानी १४–१५ वर्ष में लगभग एक कि०मी०। सूर्य का वर्तमान व्यास १४ करोड़ कि० मी० है। इस हिसाब से वह कुछ करोड़ वर्ष में शक्ति शून्य हो जाएगा। यह गणना भी निरर्थक-सी प्रतीत हुई।

अणुओं और परमाणुओं की जानकारी—इधर वैज्ञानिकों ने अणुओं और परमाणुओं के क्षेत्र में प्रवेश

किया। १६२५ में अंग्रेजी वैज्ञानिक सर आर्थर एडिङ्ग-टन ने विचार प्रस्तुत किया कि सम्भवत: सूर्य में शक्ति अणु और परमाणुओं से ही उत्पन्न होती हो। सन् १६३८ में वीसजाकर और वंथे नामक जर्मन वैज्ञानिकों ने अपनी विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की। आज सभी वैज्ञानिक यह मानते है कि सूर्य में उद्जन बमों के विस्फोट से शक्ति पैदा होती है। वहां बम नहीं है, वरन् शक्ति उत्पादन उन्हीं कारणों से होता है जो बमों में प्रयुक्त होता है। सूर्य के अन्दर उद्जन चार परमाणुओं के मेल से हेलिम तत्व का एक परमाणु (एटम) बनता रहता है। इसी क्रिया के मध्य पदार्थ की एक प्रतिशत से भी कम मात्रा, शक्ति में परिणित हो जाती है। एक ग्राम उद्जन से दो लाख कि० वाट ओवर शक्ति उत्पन्न होती है। इस प्रकार एक सेकिंड में ४० लाख टन वजन का पदार्थ शक्ति में बदलता है। इस हिसाब से सूर्य १३००० करोड़ वर्ष तक शक्ति उत्पादन करता रहेगा।

धरती पर सूर्य की शक्ति—धरती पर जिस प्रकार भी शक्ति उत्पन्न होती है, वह मूल रूप से सूर्य से ही प्राप्त है। तेल, पैट्रोल, कोयला, ईंधन इत्यादि के मूल में सूर्य की ही किरणें कार्यरत हैं। पृथ्वी के

ये साधन धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। इनकी
समाप्ति से पूर्व अब मानव की दृष्टि सूर्य-ऊर्जा प
लगी हुई है। सन् १६६० में इंगलैंड में एक ऐसी गा
का आविष्कार किया गया जो अपनी छत पर पड़ने
वाली सूर्य-किरणों से चलती थी। हमारे देश में
राष्ट्रीय भौतिकी-प्रयोगशाला में एक ऐसा चूल्
बनाया गया है जिससे रोटियां बनाई जा सकें।

इस दिशा में वैज्ञानिक निरन्तर कार्यरत हैं। रूस
और अमरीका में सौर-ऊर्जा से बैटरियां तक बना ली
गई हैं। ये धूप से बिजली पैदा करती हैं। उस बैटरी
से रेडियो और ट्रांजिस्टर चलाए जाते हैं। अनेक देशों
में दर्पणों के प्रयोग से ऐसे यंत्र बनाए गए हैं, जं.
धातुओं को पिघला सकते हैं। इस प्रकार आजकल
सौर ऊर्जा के प्रयोग की दिशा में हर देश के वैज्ञानिकों
का ध्यान लगा है। इस शक्ति के अभी अरबों वर्ष
तक समाप्त होने की संभावना नहीं है।

निष्कर्ष—सूर्य के अन्दर होने वाली हलचलें
पृथ्वी पर अपना प्रभाव डालती हैं। इनमें सूर्य के
कलंक विशेष प्रभावशाली हैं। सूर्य के सूक्ष्म कण और
...ी किरणें सूर्य की ज्वालाओं से निकलकर
की ओर आती हैं। इस रहस्य का उद्घाटन

सर्वप्रथम १८०१ में हर्शल नामक वैज्ञानिक ने किया।

जब सूर्य के कलंकों की संख्या मे वृद्धि होती है तो समुद्र का पानी अधिक भाप बनता है, अधिक बादल बनते हैं और अधिक वर्षा होती है। गर्मी बढ़ने पर पर्वतीय प्रदेशों का बर्फ अधिक पिघलता है और नदियों मे अधिक पानी आता है। इसका स्थलीय जल वायु पर भी प्रभाव पड़ता है। जलवायु के साथ-साथ इसका पृथ्वी की उपज पर भी प्रभाव होता है।

सूर्य के शरीर मे कलंकों की संख्या बढने पर ज्वालाएं प्रकट होती हैं। ऐसा होने पर देखा गया है कि दूर देशों के रेडियो प्रसारणों पर प्रभाव पडता है। उन्हें सुनने में कठिनाई होने लगती है। प्रकाश की तरंगों के समान रेडियो तरंगें भी सीधी चलती हैं। जब रेडियो प्रसारण प्रोग्राम दो तीन हजार मी० दूर पहुंचता है तो गोल पृथ्वी बीच में आ जाती है। उस समय भूमंडल पर फैली सूर्य के सूक्ष्म कणों की परतें रेडियो तरंगों की सहायक होती हैं। परन्तु जब सूर्य पर उत्पन्न फ्लेयर पृथ्वी की दिशा में बढता है तो वह रेडियो तरंगों के कार्य में गड़बड़ पैदा कर देता है। इसी से रेडियो प्रसारण रुक जाता है। जब दूरगामी रेडियो प्रसारण मे बाधा आती है तो पृथ्वी

प्रदेशों के नभ में रंग-बिरंगी प्रकाश चवनिकाएं झूल
उठती हैं।

पहले वैज्ञानिक यह मानते थे कि सूर्य और पृथ्वी
के बीच करोड़ों कि० मी० का शून्य है। अब विकिरण
मेखलाओं का आविष्कार होने पर यह माना जाने
लगा है कि इन दोनों के बीच एक चुम्बक-मण्डल है
जिसे मेगनेटोस्फीयर कहते हैं। विकिरण मेखलाए
उसी का एक भाग हैं। इस मेगनेटो स्फीयर के
सूचनाएं हमें आकाश में छोड़े गए उपग्रहों से प्राप्त
होती हैं। जब किसी पिण्ड की ओर उपग्रह भेज
जाता है तो उसे भेजने पूर्व पृथ्वी और पिण्ड के बीच
की जानकारी प्राप्त करली जाती है। यदि उपग्रह
पर किसी मनुष्य को भेजना हो तो यह जानना होता
है कि वह पिण्ड मनुष्य के उतरने योग्य है या नहीं।

जब मनुष्य को चन्द्रमा पर भेजा गया था, तो
उस पिण्ड की पूर्ण जानकारी पहले से प्राप्त करली
गई थी। चन्द्रमा के समान सूर्य पर उपग्रह नहीं भेजा
जा सकता क्योंकि वह इतना गर्म है कि वहां पहुंचने
से पूर्व ही उपग्रह जलकर राख हो जाएगा। सूर्य-पिण्ड
में ऐसी जमीन भी नहीं है जहां कोई उपगृह उतर
सके।

बिजली

विषय-क्रम

सुरुचिपूर्ण

बाल-साहित्य

के

शीर्षस्थ प्रकाशक

बिजली की उपयोगिता

आज का संसार बिजली के चमत्कार का संसार है। बिजली हमारे जीवन की महत्वपूर्ण आवश्यकता बन गई है। हमारे अधिकांश काम बिजली से चलते हैं। हमारे घरों में प्रकाश, गर्मी में हवा, शीतकाल में गर्मी, सड़कों पर प्रकाश सब बिजली से ही प्राप्त होता है। बहुत से घरों में पानी गर्म करने और खाना बनाने तक के लिए बिजली का प्रयोग किया जाता है। यहां तक कि हमारे मनोरंजन के विशेष साधन भी बिजली से ही उपलब्ध होते हैं। सिनेमा, टेलीविजन, रेडियो, टेलीफोन इत्यादि सब बिजली से ही चलते हैं। कई-कई मंजिल ऊंची इमारतों में ऊपर चढ़ने के लिए लिफ्ट बिजली से ही काम में लाई जाती हैं। इनके अतिरिक्त अन्य छोटे बड़े कामों के लिए बिजली को काम में लाया जाता है।

बिजली द्वारा छोटे बड़े कल कारखाने भी चलाए

जाते हैं। पहले इसका फैक्ट्रियों में ही प्रयोग किया
गया था, परन्तु अब कुटीर उद्योगों में भी बिजली का
प्रयोग किया जाता है। इससे उत्पादन की गति बहुत
बढ़ गई है। खेती के क्षेत्र में ट्यूबवैल के लिए तथा
थ्रेशर और गन्ना पेलने की कोल्हुओं में भी बिजली
काम देती है। आजकल रेलों के आवागमन में भं
बिजली महत्वपूर्ण स्थान पा चुकी है। पहले बड़े
शहरों, जैसे कलकत्ता, दिल्ली, बम्बई इत्यादि, शहरों
में ट्रामों में इसका प्रयोग किया गया, परन्तु अबतीव्र
गामी रेलें भी इससे चलाई जाती है।

बिजली की दासता---आज के व्यक्ति का जीवन
एक प्रकार से बिजली का दास बन गया है। बिजली
चालू रहे तो वह स्वर्ग में विचरण करता है और उसके
न रहते ही स्वर्ग नर्क बन जाता है। कल्पना करें, यदि
अचानक बिजली चली जाए तो आपके घर की क्या स्थिति
हो। बत्तियां बुझने पर घर अंधकार से भर जाएगा,
पंखे बन्द हों तो बदन पसीना-पसीना हो जाएगा,
चूल्हा बुझ जाएगा तो खाना बनना बन्द, रेफ्रिजिरेटर
बन्द होने पर उसके अन्दर रखी वस्तुएं सड़ने लगेंगी,
न। रुक जाएगा। इसी प्रकार कल कार
में का— बन्द होने पर उत्पादन रुक जाए

काम करने वाले वेकार हो जाएंगे, रेलें बीच जंगलों में खड़ी हो जाएंगी। बाजारों का कारोबार रुक जाएगा, कार्यालयों का काम बन्द हो जाएगा। बतलाइए यह स्थिति नर्क के जीवन से क्या कम होगी। ऐसी स्थिति बड़े-बड़े अंधड़ों, तूफानों या संयंत्रों में कोई गड़बड़ होने के कारण आती है। सामान्य रूप से ऐसी स्थिति कम ही आती है।

विजली के आविष्कार से पूर्व—विजली का आविष्कार १९वीं शताब्दी के अंतिम भाग में हुआ। उससे पूर्व प्रकाश के लिए तेल-लैम्पों, मोम बत्तियों तथा गैस बत्तियों का प्रयोग किया जाता था। उन दिनों घरों में ही नहीं रेलवे स्टेशनों तथा सडकों पर प्रकाश के लिए भी तेल लैम्पों का इस्तेमाल होता था। तेल लैम्पों के पश्चात गैस लैम्पों का प्रयोग किया जाने लगा। गैसों का प्रयोग आजकल भी बारातों के साथ किया जाता है।

परिवहन के क्षेत्र में पहले घोड़ा गाड़ियों, बैल तांगों तथा पानी में पालदार बड़ी नावों का चलन था। इन नावों को छोटे जहाजों का रूप देकर समुद्रों तक को पार किया गया। खाना बनाने तथा भट्टियां चलाने के लिए कोयले और लकड़ी का प्रयोग होता

ईसा से छै सौ वर्ष पूर्व ग्रीस मे थैलीज नामक गणितज्ञ ने जन्म लिया था। उसने एक दिन ऐम्बर को साफ करने के लिए किसी वस्त्र से रगड़ा। वह उस रगड़न को ध्यान से देखकर कुछ सोचने लगा। उसने देखा कि एम्बर के पास पड़ा लकड़ी का टुकड़ा आगे बढ़कर ऐम्बर से चिपक गया। उसने दोबारा वैसा ही करके देखा और परिणाम वही निकला जो उसने पहले देखा था। उसने सोचा कि क्या ऐम्बर किसी अन्य वस्तु को भी इसी प्रकार अपने से चिपका सकता है। उसने अन्य परीक्षणों से ज्ञात कर लिया कि ऐम्बर चिड़िया के पर जैसी हलकी वस्तुओं को आकर्षित करने में भी समर्थ था।

थैलीज चुम्बक पत्थर को जानता था। उसे ज्ञात था कि वह लोहे को अपनी ओर खींचने की शक्ति रखता है। परन्तु ऐम्बर बिला रगड़े ऐसा नही कर पाता। वह इस रहस्य को न जान पाया, परन्तु उसकी वह खोज बिजली इतिहास की एक महत्वपूर्ण खोज थी।

इलेक्ट्रोस्कोप—लगभग दो हजार वर्ष पश्चात इंगलैण्ड के लण्डन शहर के विलियम गिलबर्ट की 'दी मैगनेट' पुस्तक छपी। उसने परीक्षण करके देखा कि रगड़ने पर ऐम्बर के समान गंधक, शीशा और मोम

में भी आकर्षण शक्ति आ जाती है। उसने यह भी देखा कि कुछ वस्तुओं को चाहे जितना रगड़ो उनमें आकर्षण शक्ति उत्पन्न नहीं होती। इस शक्ति को उसने बिजली, इलेक्ट्रिसिटी का नाम दिया। उसने अपने परीक्षणों के आधार पर आकर्षित करने वाले और न आकर्षित करने वाले पदार्थों के दो वर्ग बनाए। पुस्तक में उसने उन पदार्थों का विशेष उल्लेख किया जिनमें आकर्षित करने की अधिक शक्ति थी। इस वर्गीकरण के लिए उसने इलेक्ट्रोस्कोप यन्त्र बनाया था जिस पर वह हर वस्तु का परीक्षण करता था। थेलीज के समान गिलबर्ट भी इस आकर्षण के रहस्य को ज्ञात न कर पाया परन्तु उसने जो खोजें कीं उनके आधार पर उसे बिजली का जन्मदाता माना जाता है।

बिजली के परीक्षण

गिलबर्ट की 'दी मैगनेट' पुस्तक वैज्ञानिकों के पास पहुंची तो उन वैज्ञानिकों ने उसमें विशेष रुचि ली जो इस दिशा में प्रयत्नशील थे। कुछ ने उसका उपहास भी किया परन्तु आस्थावान वैज्ञानिकों को उससे कार्य करने की दिशा मिली।

शून्यक—इसके छः वर्ष पश्चात जर्मनी के मागडे-वर्ग नगर के ऑटोवॉन गुएरिक ने जब यह घोषित किया कि उसने एक ऐसी मशीन बना ली है, जिससे वायु का प्रभाव समाप्त किया जा सकता है तो उसका उपहास किया गया। उसने अपने आलोचकों की बातों पर ध्यान न दिया और अपने शून्यक को और पुष्ट करता गया।

१६५४ में उसे सम्राट फर्दीनांड के मागडेवर्ग आने की सूचना मिली। सम्राट ने उसके 'शून्यक' उत्पन्न करने पर सन्देह व्यक्त किया था। यह समा-

चार पाकर वह अपने अन्वेषण की हर चीज को व्यवस्था देने में लग गया।

सम्राट के आदर-सत्कार में शहर को सजाया गया। नगर के द्वार पर सम्राट तथा उसके दल का भव्य स्वागत किया गया। उसके पश्चात भोज में नगर के सभी सम्मानित व्यक्तियों ने भाग लिया। भोजन के पश्चात वॉन गुइरिक ने अपने निर्यात पम्प का करिश्मा दिखाने की घोषणा की। प्रदर्शन की तैयारी एक खुले मैदान में की गई थी। सम्राट के साथ अन्य सब लोग मैदान में आ पहुंचे और आराम से प्रदर्शन देखने के लिए बैठ गए।

वॉन गुएरिक ने तांबे के दो गोलार्ध लेकर उन्हें सबको दिखाया। उन्हें मिलाने से एक तांबे की गेंद बन जाती थी। वे अन्दर से खोखले थे। गुअइरिक ने उन्हें कई बार जोड़ और प्रथक करके दिखाया और फिर अपना निर्यात पम्प निकालकर उसकी नली जुड़े हुए गोलार्धों के बल्व से जोड़ दी। फिर बोला, "अब आप देखिए इससे हवा कैसे बाहर निकलती है।"

उपस्थित जनों में सन्नाटा छा गया। गुइरिक ने अपना कार्य आरम्भ किया। धीरे-धीरे उसको पम्प चलाने की गति रुकती गई और अन्त में रुक गई।

तब उसने सम्राट से कहा, "सम्राट ! अब इसके अन्दर शून्यक है। इस गोले के बाहर से हवा का दबाव है। यह दबाव इन गोलों को प्रथक-प्रथक नहीं होने देगा। आप इस गोले के भागों को अलग-अलग करने का प्रयास करें।"

सम्राट फर्डीनांड वलवान व्यक्ति था। उसने उन्हें अलग-अलग करने के लिए पूरी शक्ति लगा दी परन्तु वह उन्हें हिला भी न पाया। फिर गुइरिक के संकेत पर मैदान में घोड़े लाए गए और गेंद के दोनों ओर के छल्लों में रस्सियां डालकर दो-दो घोड़े बांधे गए। फिर घोड़ों को चाबुक लगाकर विपरीत दिशा में शक्ति आजमाने का अवसर दिया, परन्तु उन्हें सफलता न मिली। तब चार घोड़े और लाए गए। अब प्रत्येक गोलार्ध को चार-चार घोड़े खींच रहे थे, परन्तु परिणाम में अन्तर न आया। जब घोड़ों की संख्या बढ़ाकर १६ कर दी गई और उन्होंने पूरी शक्ति लगाई तो एक जोर का धमाका हुआ और दोनों गोलार्ध अलग-अलग हो गए।

सम्राट फर्डीनाड का सन्देह जाता रहा और उसने वॉन गुइरिक से अपने परीक्षण जारी रखने को कहा। गुइरिक बिजली की खोज की दिशा में एक महत्वपूर्ण

कदम था। अब गुइरिक को अपनी वैज्ञानिक खोज करने की स्वतन्त्रता मिल गई थी। अब लोगों को उसकी कार्यक्षमता पर विश्वास हो गया था। गुइरिक समय नष्ट न कर अनुसंधान पर जुट गया। उसने 'दी मेगनेट' पुस्तक ध्यानपूर्वक पढ़ी और गिलबर्ट के परीक्षण दुहराए। उसने एक शक्तिशाली आवेश प्राप्त करने वाली मशीन बनाई। उसने यह भी ज्ञात किया कि विद्युतीय आवेश एक वस्तु से दूसरी वस्तु में स्थानांतरित किया जा सकता है। उसने यह प्रयोग कई वस्तुओं पर किया। विद्युत के इतिहास में यह भी एक महत्वपूर्ण कदम था। गुइरिक की खोजें यहीं समाप्त हो गईं।

पचास वर्ष और व्यतीत हो गए। लन्दन में स्टीफन ग्रे नामक वैज्ञानिक रहता था। निर्धन इतना था कि यदि उसका मित्र ग्रेनविन ह्वलर उसकी सहायता न करता तो वह अपने महत्वपूर्ण परीक्षण न कर पाता। ह्वलर धनवान व्यक्ति था। उसकी विज्ञान और ग्रे की खोजों में रुचि थी। वह उसका एक प्रकार से संरक्षक बन गया था।

विद्युत तार—एक दिन ग्रे अपने मित्र के घर जाकर बोला, "मुझे पता चल गया मेरे पहले परीक्षणों

में क्या गलती थी। जरा मेरा सामान तैयार करने में मेरी सहायता करो।" यह कहकर ग्रे ने एक धागे का गोला निकाला और कमरे के आर-पार उसके धागे को बांधा। उसने धागे के एक सिरे पर हाथी दांत की गेंद बांधी और दूसरे पर शीशे का डण्डा बाधा। ग्रे ने ह्वीलर को एक पर देकर कहा, 'इसे गेंद के निकट रखो।' और ह्वीलर ने वैसा ही किया।

ग्रे ने नरम कपड़े से शीशे के डण्डे को रगड़ना आरम्भ किया। कुछ देर बाद उसने दूसरे सिरे से ह्वीलर के शब्द सुने, "पर गेंद से चिपक गया। तुम्हारा परीक्षण सफल हुआ।" इस प्रकार विद्युत इतिहास मे प्रथम बार विद्युत आवेश को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया गया। उस धागे की लम्बाई ८८६ फुट थी। ह्वीलर ने ग्रे की कौली भर ली।

ह्वीलर के प्रोत्साहन और सहयोग से ग्रे ने अपने परीक्षण जारी रखे। उसने विद्युत प्रवाहित न करने वाले पदार्थों को 'प्रथककारी' कहा ये सवाहक में बहने वाली बिजली मे बाधा उपस्थित नहीं करते। ग्रे की इस खोज के आधार पर विद्युत्-तार का निर्माण हुआ, जो तांबे का संवाहक है और रबड़ अथवा प्लास्टिक के प्रथककारी पदार्थ से ढका रहता है।

लेडन-जार—अब समस्या यह थी कि आवश्यकतानुसार बिजली कैसे बनाई जाए और उसे कैसे संग्रहीत किया जाए। १७४४ में हॉलैण्ड के लेडन विश्वविद्यालय में 'लेडन-जार' नामक यंत्र बनाया गया। इस जार के अन्दर आवेश को आवश्यकतानुसार रोका जा सकता था। यह सम्पूर्ण विज्ञान-जगत में मशहूर हुआ और जगह-जगह उसका प्रदर्शन किया गया। कुछ लोग आगे बढ़कर बिजली के झटके को महसूस करते 'लेडन-जार' को लोग खिलौना समझकर उसके प्रदर्श में आनन्द लेने लगे।

तडित संवाहक—जब १७५० में 'लेडन-जार' का समाचार अमरीका पहूंचा तो अमरीका नितान्त अविकसित देश था। यूरोप जैसी वैज्ञानिक प्रगति वहां नहीं थी। न वहां वैज्ञानिक गोष्ठियां होती थीं न वहां विज्ञान के प्रति कोई रुचि थी। जो लोग विज्ञान में रुचि रखते थे उन्हें वैज्ञानिक उपकरण, सामग्री तथा पुस्तके यूरोप से मंगानी होती थीं। बेंजामिन फ्रैंकलिन उन्हीं कुछ गिने-चुने लोगों में था। वह इंग्लैण्ड से वैज्ञानिक पुस्तकें मंगाकर पढ़ता और परीक्षण करता।

फ्रैंकलिन ने 'लेडन-जार' मंगाकर उसका अध्ययन करके परीक्षण किया। उसने आकाश की बिजली से

उसका मिलान किया तो उसे दोनों में कोई फर्क दिखाई न दिया। उसने रेशम की पतंग बनाई और एक दिन जब आकाश में काले बादल मंडराए तो उसने मैदान में जाकर उसे उड़ाया। पतंग आकाश में उड़ने लगी। उसने अपने हाथ की डोर के सिरे पर चाबी बांध दी। आकाश में बिजली चमकी तो फ्रैंकलिन ने सावधानी से चाबी को छुआ। इससे उसे झटका लगा। उसका विचार दृढ़ हो गया कि आकाश में चमकने वाली चीज बिजली ही है।

फ्रैंकलिन ने अपने लड़के विलियम को भेजकर अपने अध्ययन-कक्ष से लेडन-जार मंगाया और चाबी को उसकी कील पर रखा तो उसने स्पष्ट स्फुलिंग उड़ते देखे। जार आवेश युक्त हो गया। यह देखकर फ्रैंकलिन और विलियम वहां से दूर हट गए। फिर फ्रैंकलिन, काफी दिन तक अपने उस परीक्षण के विषय में सोचता रहा। उसने निष्कर्ष निकाला कि बिजली हमारे चारों ओर विद्यमान है और इसका आवेश धनात्मक से ऋणात्मक की ओर जाता है। फ्रैंकलिन ने तड़ित-संवाहक का आविष्कार किया और बिजली के क्रियात्मक उपयोग को दिशा दी। वह बिजली गिरने के विनाशकारी रूप से परिचित था।

उसने यह खोजकर कि बादलों की बिजली और पृ
पर पैदा किए स्फुलिंग में कोई अन्तर नहीं है, वह वि
ज्ञात की कि विजली गिरने से विनाश को कैसे रो
जा सकता है। उसने भवन की छत पर एक छ
लगाई और उससे तार बांधकर उसे जमीन तक
गया, जिससे विजली का आवेश छत की छड़ में आ
तार द्वारा भूमि में चला जाए और मकान को क्षति
पहुंचे। फ्रेंकलिन का यह आविष्कार बहुत शीघ्र अ
रीका और यूरोप में अपनाया गया। यह तड़ि
संवाहक आज विश्व भर में प्रचलित है।

प्राणि-विद्युत—फ्रेंकलिन ने तडित और बिज
का सम्बन्ध अवश्य खोज निकाला परन्तु अभी बिज
के उपयोग की समस्या हल नहीं हो पाई थी। इट
के वोलोग्ना नगर के विश्वविद्यालय में लुइजो गैल्वा
शरीर रचना-विज्ञान का प्राध्यापक था। बिजली
विषय में खोज करना उसका विषय नहीं था। ए
दिन वह शरीर रचना का पाठ पढ़ा रहा था अ
मेंढ़क की टांगें उसके सामने एक धातु की तश्तरी
रखी हुई थीं। उसने छुरी से एक टांग को छुआ
वह उछल पड़ी। गैल्वानो आश्चर्यचकित रह गया।
सकी समझ में कुछ न आया। फिर उसने उसे दोबारा

छुआ तो फिर वही स्थिति हुई।

गॅल्वॅनो मीटर—गॅल्वानी ने इस रहस्य को जानने का दृढ़ संकल्प कर लिया। उसे जब समय मिलता वह मेंढ़क की टांगों का परीक्षण करता। वह ग्यारह वर्ष तक परीक्षण करता रहा और उन्हें नोट करता रहा। उसे निश्चय हो गया कि मेंढ़क की टांगें बिजली के कारण उछलती हैं। उसने इन तथ्यों को एक लेख में प्रकाशित किया। उसे यूरोप के वैज्ञानिकों ने महत्वपूर्ण माना और 'प्राणि-विद्युत' की कल्पना की, परन्तु उसे कुछ ही दिन पश्चात् गलत माना गया। उसने 'गॅल्वॅनी मीटर' की ईजाद की, जिससे बिजली की तरंगें मापी जाती हैं।

विद्युतीय विश्लेषण प्रक्रिया

इटली के भौतिकी प्राध्यापक अलेक्सांद्रो वोल्टा ने मेंढक की टांगों के अतिरिक्त अन्य कई वस्तुओं के परीक्षण किए और उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक बिजली की जानकारी में पर्याप्त सफलता प्राप्त कर ली। वह अपने परीक्षणों से इस निर्णय पर पहुंचा कि विद्युत रसायन से उत्पन्न होती है। जब लवण विलय से दो धातुएं छूती हैं तो स्फुरण होता है। मेंढक की टांगों में लवण था इसीलिए जब नीचे की प्लेट और चाकू ने उन्हें छुआ तो स्फुरण हुआ था।

वोल्टीय पाइल—बिजली के विषय में इतना ज्ञान प्राप्त कर वोल्टा ने सोचा कि इसे उपयोगी कैसे बनाया जा सकता है। उसने तांबे और जस्ते की प्लेटों को एक दूसरे के ऊपर रखकर गड्डियां बनाईं और उनके बीच में लवण विलय के सोखते भिगोकर रखे। फिर ऊपर की प्लेट और नीचे की प्लेट को तार
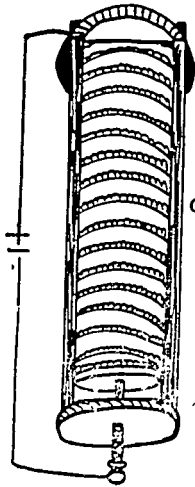
वोल्टीय
पाइल

से जोड़ा तो उस तार में बिजली प्रवाहित होने लगी। इस प्रकार वोल्टा ने पहली बैटरी बना डाली।

बैटरी बनाकर वोल्टा ने अपने इस नये आविष्कार को विज्ञान जगत के सामने प्रस्तुत किया। उसकी बैटरी को 'वोल्टीय पाइल' कहा गया। इस आविष्कार ने मेंढक की टांगों को भुला दिया और वैज्ञानिकों ने अपना ध्यान इस विद्युत धारा की ओर लगा दिया।

बैटरी की उपयोगिता—इसी आविष्कार के आधार पर कालान्तर में जेनेरेटरों का निर्माण भी किया गया, परन्तु बैटरी की अपनी विशेष उपयोगिता है। इससे विद्युत धारा कम अवश्य होती है, फिर भी इनसे बहुत उपयोगी काम निकलते हैं। आज के जगत में इनका विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है, रेडियो, मोटरों और ट्रकों इत्यादि में इन्हें काम में लाया जाता है। टेलीग्राफ में भी इन्हें काम में लाया जाता है। उपग्रहों से संकेत भी बैटरियों द्वारा ही भेजे जाते हैं। आधुनिक बैटरियों में सुधार अवश्य हुए हैं परन्तु उनका निर्माण लगभग उसी प्रकार का है जैसा वोल्टा ने किया था।

बेंजामिन का प्रयास—वोल्टीय पाइल तय्यार होते

्रोप की विभिन्न प्रयोगशालाओं में इस पर अनु-
न किए जाने लगे। वैज्ञानिक इस नतीजे पर पहुंचे
कई बैटरियों को जोड़कर अधिक शक्तिशाली बैटरी
ई जा सकती है। सन् १८०० में लन्दन की रॉयल
टीट्यूशन में उस समय की सबसे बड़ी बैटरी बनी,
२०० युगल सैलों की थी। इस इंस्टीट्यूशन का
थापक बेंजामिन रमफोर्ट था, जिसने अपनी सब
ी इस काम मे लगा दी थी। वह सोच रहा था कि
से धन कैसे एकत्रित किया जा सकता है। उसने
ई व्याख्यानों का कार्यक्रम बनाया, जिसे सुनने लोग
एं और उसके काम मे रुचि लें तो उसकी आर्थिक
मस्या हल हो सके।

बेंजामिन ने हमफ्री डेवी को इस विषय में व्याख्यान
ने को नियुक्त किया, जो रोचक ढंग से विषय को
श्रोताओं के सामने रख सके। डेवी रसायन और
बिजली के विषय में काफी कुछ जानता था। उसके
व्याख्यानों का श्रोताओं पर जादू जैसा प्रभाव पड़ा।
उसने जो प्रयोग प्रस्तुत किए उनका लोगों ने हार्दिक
स्वागत किया। इससे रायल इंस्टीट्यूशन को लोक-
प्रियता प्राप्त हुई और आर्थिक लाभ भी हुआ।

डेवी के परीक्षण—डेवी प्रतिभाशाली व्यक्ति था।

उसे इस कार्य में संलग्न होने का लाभ यह हुआ कि परीक्षणों के लिए साधनयुक्त प्रयोगशाला मिल गई। एक दिन उसने बैटरी के दोनों तारों को जल के बर्तन में डालकर देखा कि क्या होता है। उससे बुलबुले बनने लगे। उसे विलियम निकल्सन और सर एन्थोनी कालिजल के परीक्षणों का स्मरण हो आया। उसने अनुमान लगाया। वे ऑक्सीजन और हाइड्रोजन गैसें थीं। उसने उन बुदबुदों को परख नलियों में एकत्रित किया और उनकी सावधानी से परख की। उसने महसूस किया कि उसने कोई महत्वपूर्ण बात खोज निकाली। वे गैसें हाइड्रोजन और ऑक्सीजन ही थीं। हाइड्रोजन ऑक्सीजन से दोगुनी थी। इस प्रकार उसने जल की संरचना का पता लगा लिया। इन गैसों के निकल जाने पर बर्तन का पानी कम हो गया था।

डेवी की इससे यह धारणा बनी कि जल के समान अन्य पदार्थों को भी विघटित किया जा सकता है। डेवी की इस विधि को विद्युत-विश्लेषण कहा गया। इस प्रकार बिजली के माध्यम से रसायन के नए प्रयोगों की दिशा खुल गई।

डेवी की खोज का उद्योगों पर प्रभाव—विद्युत-विश्लेषण का प्रभाव यूरोप के औद्योगिक क्षेत्र में

व्यापक रूप से हुआ। इससे कई नई धातुएं बनीं और सस्ता उत्पादन हुआ। आरम्भ में यह कार्य बहुत कठिन था तथा धातुओं के मिश्रण तथा धातुओं के परिवर्तन में काफी व्यय होता था। १८८५ में पेरिस में एक प्रदर्शनी के अन्दर डेविले ने एलुमिनियम की छड़ें रखीं, जिन्हें बनाने में ६० पौंड प्रति डालर खर्च आता था। उस प्रदर्शनी को देखने नेपोलियन तृतीय आए तो डेविले ने उनके राजकुमार को एलुमिनियम के खिलौने भेंट किए। उन्होंने एलुमिनियम के बर्तन बनवाए, जिनमें अतिथियों को भोजन परसा जाता था। यह वही एलुमिनियम है, जिसके बर्तन आज घर-घर में मिलते हैं। यह बहुत हलका होता है और इसमें जंग नहीं लगता। इसे साफ रखना सरल है। इसका फर्नीचर भी बनने लगा है। इसका उपयोग जहाज बनाने में भी किया जाता है। यह धातु पृथ्वी पर बहुतायत में उपलब्ध है। आम प्रयोग में आने वाले बर्तनों में इसके बर्तन सबसे सस्ते होते हैं। इसे सस्ता बनाने की दिशा में चार्ल्स हाल ने प्रयत्न किया।

चार्ल्स का विद्युतीय विश्लेषण—चार्ल्स स्नातक बनकर अपने घर गया और उसने अपनी प्रयोगशाला

विद्युत चुम्बक का निर्माण

सन् १८०६ में कोपनहेगन विश्वविद्यालय मे हान्स ओरस्टड भौतिक शास्त्र का अध्यापक था। वहां की प्रयोगशाला में उसे परीक्षण करने की हर सुविधा प्राप्त थी। उसका उस विश्वविद्यालय में बड़ा ही सम्मान था।

विद्युत चुम्बक—सन् १८२० में वह अपनी कक्षा में 'वोल्टीय पाइल' पर व्याख्यान दे रहा था। उसने बैटरी को जोड़ा तो उससे बिजली की धारा वहने लगी। अकसमात वहीं मेज पर कम्पास रखा था। उसने देखा कम्पास की सूई उत्तर दिशा को ओर न होकर पूर्व की दिशा में थी। ओरस्टड को अपनी आंखों पर विश्वास न हुआ। उसने बैटरी बन्द करके
तो अब सूई सामान्य रूप से उत्तर दिशा में थी।
के सामने एक रहस्य उपस्थित हो गया।
समाप्त होने पर उसने फिर बैटरी चालू

की ओर कम्पास की सूई फिर उत्तर दिशा में घूम गई। उसने बैटरी की धारा की दिशा बदली तो कम्पास की सूई पश्चिम दिशा में घूम गई। यह देख कर ओरस्टड दौड़ता हुआ अपने साथियों के पास गया और उन्हें अपने साथ लेकर प्रयोगशाला में आया। उसने उनके सामने अपना परीक्षण दोहराया तो सब आश्चर्य-चकित रह गए। यह बिजली की धारा के चुम्बकीय होने का प्रमाण था। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि बिजली की शक्ति चुम्बक की शक्ति से अधिक थी जो उसकी सूइयों दिशा बदलने में समर्थ की हुई।

चुम्बकीय क्षेत्र—ओरस्टड ने यह तो समझा कि उसे एक महत्त्वपूर्ण रहस्य ज्ञात हुआ, परन्तु इसकी व्यावहारिक उपयोगिता क्या हो सकती थी यह अभी रहस्य था। उसने विज्ञान-जगत को अपनी खोज की सूचना दी। उसने जो विवरण प्रस्तुत किया, उसकी एक प्रति पेरिस के पोलिटेकनिक में गई और एम्पीयर के हाथ लगी। एम्पीयर ने वहां उसकी वैज्ञानिक के रूप में ख्याति की। उसे ओरस्टड का लेख बहुत महत्त्वपूर्ण लगा, परन्तु 'विद्युत-चुम्बक' के विषय में अभी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता थी।

एम्पीयर ने अपनी प्रयोगशाला में जाकर उसका परीक्षण किया। उसने ज्ञात कर लिया कि विद्युत धारा को ले जाने वाले तारों का चुम्बकत्व उसके चारों ओर है। यदि एक ही दिशा में विद्युत ले जाने वाले तार हों तो वे एक-दूसरे को आकर्षित करेंगे। यदि उनकी दिशा विपरीत है तो उनमें प्रतिकर्षण होगा। इस आधार पर उसने धारा के आकार, उनके बीच का अन्तर तथा चुम्बक के क्षेत्र की सांद्रता का पारस्परिक सम्बन्ध दिखाने का गणित-सूत्र स्थापित किया। उस सूत्र की गणितज्ञता आज भी स्वीकार की जाती है।

विद्युत-चुम्बक का आविष्कार—एम्पीयर ने खोज की कि विद्युत-तार के चारों ओर चुम्बकीय क्षेत्र काफी दूर तक होता है। उसने पता लगाया कि मुड़े तार में चुम्बकीय शक्ति अधिक होती है। इसी के आधार पर उसने फिर कुण्डलीकार तार पर परीक्षण किया। उसमें इतनी शक्ति आ गई कि वह लोहे के बड़े टुकड़े को उठा सकता था। इस प्रकार उसने विद्युत-चुम्बक बना ली। कुण्डलीकार तार में बिजली प्रवाहित होते ही उसमें चुम्बक तत्त्व पैदा होता है और बिजली बन्द होने पर तार अपना चुम्बक तत्त्व खो देता है।

एम्पीयर का उत्साह बढ़ा और उसने अपनी खोजें

जारी रखीं। उसने परीक्षण किया कि कठोर स्पात में चुम्बक तत्त्व पैदा करने के लिए उसमें अधिक बिजली छोड़ने की आवश्यकता है, परन्तु जब उसमें चुम्बक तत्त्व आ जाता है तो काफ़ी देर-देर तक रहता है। एम्पीयर की इस खोज ने वैज्ञानिकों को आश्चर्य-चकित कर दिया और सांद्रता की विद्युतीय इकाई को एम्पीयर नाम से पुकारा गया।

बिजली का व्यवहारिक प्रयोग—विद्युतीय-चुम्बक के आविष्कार के पश्चात बिजली को व्यवहारिक उपयोग में लाया जाने लगा। अब बिजली को अपने काम की चीज बनाने की दिशा में वैज्ञानिकों ने विचार करना आरम्भ किया। बिजली की घंटियां बनाई गईं जो स्कूलों और दफ्तरों अथवा घरों में लगाई जाने लगीं। यह बटन दबाते ही बजने लगती हैं। साधारण आदमियों ने भी अब धनोपार्जन के लिए नई-नई बिजली की चीजें आरम्भ कर दीं। इससे बिजली की छोटी-छोटी बहुत-सी चीजों से बाजार पट गया। आरम्भ में बिजली से बिजली की अंगीठियां, कपड़ों की सिलवटें खोलने के प्रेस तथा बहुत से खिलौने बने, जिनकी बाजारों में अच्छी मांग हुई और उनकी छोटी-छोटी फैक्ट्रियां लगाई जाने लगीं। यह माल बाजार में खूब

बिजली की घण्टी

जारी रखीं। उसने परीक्षण किया कि कठोर स्पात में चुम्बक तत्त्व पैदा करने के लिए उसमें अधिक बिजली छोड़ने की आवश्यकता है, परन्तु जब उसमें चुम्बक तत्त्व आ जाता है तो काफ़ी देर-देर तक रहता है। एम्पीयर की इस खोज ने वैज्ञानिकों को आश्चर्य-चकित कर दिया और सांद्रता की विद्युतीय इकाई को एम्पीयर नाम से पुकारा गया।

बिजली का व्यवहारिक प्रयोग—विद्युतीय-चुम्बक के आविष्कार के पश्चात बिजली को व्यवहारिक उपयोग में लाया जाने लगा। अब बिजली को अपने काम की चीज बनाने की दिशा में वैज्ञानिकों ने विचार करना आरम्भ किया। बिजली की घंटियां बनाई गईं जो स्कूलों और दफ्तरों अथवा घरों में लगाई जाने लगीं। यह बटन दबाते ही बजने लगती है। साधारण आदमियों ने भी अब धनोपार्जन के लिए नई-नई बिजली की चीजें आरम्भ कर दीं। इससे बिजली की छोटी-छोटी बहुत-सी चीजों से बाजार पट गया। आरम्भ में बिजली से बिजली की अंगीठियां, कपड़ों की सिलवटें खोलने के प्रेस तथा बहुत से खिलौने बने, जिनकी बाजारों में अच्छी मांग हुई और उनकी छोटी-छोटी फैक्ट्रियां लगाई जाने लगीं। यह माल बाजार में खूब

बिजली की घण्टी

बिका और बनाने वालों ने अच्छा पैसा कमाया।

इस प्रकार विजली व्यवहारिक प्रयोग की वस्तु बन गई और यूरोप के लगभग सभी देशों में इसके सामान का प्रचलन दिखाई देने लगा। परन्तु अभी तक इसके बड़े उपयोग सामने नहीं आए थे और न ही बड़ी मात्रा में इसे उपलब्ध किया जा सका था। इसके बड़े-बड़े जेनेरेटर भी नहीं बने थे।

सन्देश वाहकों का आविष्कार

टेलीग्राफ के आविष्कार से पूर्व संदेश भेजने का साधन घोड़ा-गाड़ो और कबूतर थे, जिनके द्वारा पत्र एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजे जाते थे। इसमें काफी समय लगता था और इसके परिणामस्वरूप संदेश बहुत देर से पहुंच पाते थे।

बिजली की चुम्बकीय खोज होने पर वैज्ञानिकों ने बिजली द्वारा संदेश भेजने को दिशा में सोचा, परन्तु सफलता अभी किसी को न मिली थी। उन्हीं दिनों अमरीकी चित्रकार सैमुअल फिन्ले ब्रीस मॉर्स ने बिजली द्वारा संदेश भेजने की कल्पना के विषय में प्रयोग करने का निश्चय किया।

सन् १८३२ में वह जहाज से स्वदेश लौट रहा था। जहाज की भोजनशाला में कुछ लोग टेलीग्राफ में बातें कर रहे थे। उन्होंने कई मशीनों के नाम लिए जो सइ दिशा में सफल न हो पाई थीं। मॉर्स ने अपने

साथी यात्रियों से बिजली के विषय में बातें का ता उन्होंने उसे बैटरियों, विद्युत-चुम्बकों और उनकी विशेषताओं का परिचय दिया। टेलीग्राफ बनने की कठिनाई भी उसे बताई। यह सब सुनकर वह भोजन-शाला से बाहर आकर डेक पर घूमने लगा। वह अब टेलीग्राफ के विषय में सोच रहा था। उसके मन में टेलीग्राफ बनाने की उत्कण्ठा जाग्रत हो उठी और उसने अपने कमरे में जाकर टेलीग्राफ बनाने की योजना बनाली।

मॉर्स ने एक वर्णमाला बनाई, जिसके अक्षरों और अंकों को उसने डैशों और डाटों से प्रकट करने की योजना बनाई। अक्षरों के मेल से, शब्द और अंकों के योग से संख्या बनाई। उसने अपना जहाज अमरीका पहुंचने से पूर्व ही अपने टैलीग्राफ का पूरा मानचित्र बनाकर तैयार कर लिया। जब वह जहाज से उतरा तो उसे पूर्ण विश्वास था कि वह यह आविष्कार अवश्य करेगा।

घर जाकर उसने अपनी प्रयोगशाला बनाई। आरम्भ में उसके प्रयोग सफल न हो पाए, परन्तु प्रयास न छोड़ा और काम पर जुटा रहा। उसने अपने ...चे में कई सुधार किए। अन्त में वह ऐसा टैली-

ग्राफ बनाने में सफल हो गया जिससे संदेश भेजे और ग्रहण किए जा सकते थे। यह नमूना उसका अवश्य बन गया, परन्तु इससे काम पूरा न हुआ। इसकी क्षमता प्रदर्शित करने के लिए काफ़ी पैसे की आवश्यकता थी। संदेश लेजाने के लिए लम्बी दूरी तक तार बिछाने की आवश्यकता थी। ये तार तथा उनके बांधने के खम्भों पर आने वाला खर्च साधारण न था और पैसे वाले लोग इस पर रुपया लगाने को तैयार नही थे।

मार्स को अपने ही खर्चे पर काम आगे बढ़ाना पड़ा। इससे उसकी स्थिति ऐसी हो गई कि उसका निर्वाह होना भी कठिन हो गया। मार्स पूरे एक वर्ष इस उधेड़ बुन में लगा रहा कि उसे कहीं से अपने प्रदर्शन के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त हो, परन्तु हो न पाई और वह निरन्तर निर्धन होता गया। ऐसी ही स्थिति में उसकी कुछ सीनेटरों से भेंट हुई और उसने उन्हें अपने आविष्कार का लाभ समझाया। उन्होंने उसे कांग्रेस से उसके आविष्कार के प्रदर्शन का खर्च दिला दिया।

टेलीग्राफ का प्रदर्शन—२४ मई १८४४ को प्रदर्शन की तिथि निश्चित की गई। इससे पूर्व बाल्टीमोर तथा वाशिंगटन के बीच ४० मील लम्बे मार्ग पर

तार बांधे गए। तार के वाशिंगटन वाले सिरे पर मार्स था और बाल्टीमोर के सिरे पर उसका सहयोगी वेल था। इस प्रदर्शन को देखने के लिए कांग्रेस के खास-खास सभी सदस्य आए।

मार्स टेलीग्राफ पर बैठा तो कमरे में उपस्थित सब लोग मौन हो गए। जब मार्स ने तार द्वारा संदेश भेजना आरम्भ किया तो कमरे में टिक-टिक शब्द गूंज रहा था। मार्स कुर्सी से उठा तो दर्शकों ने सोचा कि शायद उसने संदेश भेज दिया।

मार्स फिर कुर्सी पर बैठा। इस बार वह टिक-टिक नहीं कर रहा था, फिर यंत्र से वैसी ही ध्वनि आ रही थी। कुछ ही देर में उसे संदेश के सब अक्षर प्राप्त हो गए। इसका अर्थ यह था कि उस यंत्र से ४० मील की दूरी पर संदेश भेजा जा सकता था और उत्तर ग्रहण किया जा सकता था। यंत्र की सफलता को देखकर सीनेटर खुशी से उछल पड़े।

फिर क्या था? एक नगर से दूसरे और दूसरे से तीसरे तक तारें बिछनी आरम्भ हो गई। कुछ ही दिनों में देश अन्दर तारों का जाल बिछ गया। यह मार्स का असाधारण आविष्कार था जिसने संदेश भेजने की दिशा में आश्चर्यजनक करिश्मा करके दिखा दिया।

टेलीफोन का आविष्कार—वैज्ञानिकों ने टेली-ग्राफ को एक विशेष उपलब्धि तो अवश्य माना, परन्तु इससे उन्हें संतुष्टि न हो पाई। वे चाहते थे कि बिजली द्वारा ध्वनि को दूर तक भेजा जा सके।

इसी समय ग्राहमबेल नामक एक युवक ऐसा यंत्र बनाने में संलग्न था। जिसके द्वारा वह मनुष्य की आवाज को तारों के जरिए दूर भेज सके। ग्राहमबेल का जन्म स्काटलैण्ड में हुआ था और वहां से कनाडा चला आया था। फिर वह बोस्टन आकर बहरे बच्चों का अध्यापन कार्य करने लगा।

इसकी रुचि ऐसे यंत्र का निर्माण करने में थी, जिसके द्वारा मनुष्य की आवाज भेजी और ग्रहण की जा सके। उसने अपनी एक प्रयोगशाला बनाई और उसमें कार्य आरम्भ किया। उसके साथ उसका साथी वाटसन भी इसी कार्य में जुटा था। ग्राहमबेल टेली-ग्राफ के आविष्कार से यह निष्कर्ष निकाल चुका था कि बिजली द्वारा ध्वनि की तरंगें एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंच जाती है। वह सोचता था कि जब ध्वनि जा सकती है तो मानव-आवाज क्यों नहीं जा सकती?

ग्राहमबेल ने अपने अनथक परिश्रम के द्वारा

वाटसन के साथ मिलकर 'विद्युत वाणी मशीन' बनाने में लग गया। उसने सैंकड़ों बार प्रयोग किया—परन्तु सफलता न मिली। ऐसी दशा में उसे अपने यंत्रों में परिवर्तन करना पड़ा। सन् १८७६ की १० मार्च को वह अपने यंत्र पर बैठा था। दोनों दो कमरों में थे और बीच का दरवाजा बन्द था। ग्राहमवेल ने पास में रखी कोई चीज उठाने को हाथ बढ़ाया तो बैटरी गिर गई। उसके मुख से निकला, 'वाटसन इधर आओ तो जरा।' बीच का दरवाजा बन्द होने पर भी संग्राही यंत्र पर वाटसन ने वेल के ये शब्द सुने और वह खुशी से उछल पड़ा। वह दौड़ा हुआ वेल के पास आकर बोला, "हमारा परीक्षण सफल हो गया।"

यह टेलीफोन द्वारा सुनी गई पहली आवाज थी। वेल आश्चर्य चकित रह गया था। वह अपने कपड़ों पर गिरे बैटरी के अम्ल को भूल ही गया, जिसके लिए उसने वाटसन को पुकारा था। फिर वे आधे घंटे तक परस्पर टेलीफोन पर बातें करते रहे। एक बोलता, दूसरा सुनता, दूसरा बोलता, पहला सुनता। यंत्र ठीक काम कर रहा था। अब उन्हें इसमें कोई संदेह न रहा कि उनके उस यंत्र द्वारा मनुष्य की आवाज को स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जा सकता है।

ग्राहमवेल के टेलीफोन को सर्वप्रथम पुरस्कार देने की घोषणा की।

ग्राहमवेल की यह मशीन परिष्कृत नहीं थी और उसमें जोर से बोलने पर ही बात स्पष्ट सुनाई देती थी, परन्तु वह एक क्रांतिकारी आविष्कार था। आज हम टेलीफोन का जो रूप देखते हैं इसमें और उसमें काफी अन्तर था। अब हम डायल घुमाते हैं और संयोजन स्वयं हो जाता है। हम देश-विदेश के विभिन्न नगरों में बैठे अपने आदमियों से उसी प्रकार बातें कर लेते हैं जैसे पास में बैठे व्यक्ति से कर सकते हैं। हम टेलीफोन की आवाज से बोलने वाले व्यक्ति को पहचान लेते हैं। यह बात ग्राहमवेल के टेलीफोन में नहीं थी, परन्तु वर्तमान टेलीफोन और ग्राहम के टेलीफोन के आधारभूत सिद्धान्तों में कहीं कोई भेद नहीं है।

ग्राहमवेल ने टेलीफोन का आविष्कार कर विद्युत-शक्ति द्वारा एक ऐसी चमत्कारिक चीज मानव-जाति को प्रदान की, जो आज प्रशासन, उद्योग और व्यापार के क्षेत्र में अनिवार्य बन गई है। इस आविष्कार ने इन सभी क्षेत्रों में होने वाले कार्यों को गति प्रदान की है और अनावश्यक यातायात को कम कर दिया है। जिन कामों के लिए पहले स्वयं जाए बिना काम हो

हो नहीं सकता था, वे घर बैठे फोन पर हो जाते हैं। यह यंत्र डाक्टरों, वकीलों, इंजीनियरों, प्रशासकों, व्यवस्थापकों, पुलिस, सेना इत्यादि के लिए वरदान सिद्ध हुआ है। आज नगरों में शायद ही ऐसा कोई सभ्य तथा सुशिक्षित घर होगा जहां टेलीफोन की व्यवस्था न हो।

संदेशवाहक के रूप में टेलीग्राफ को टेलीफोन ने बहुत पीछे छोड़ दिया है।

बिजली के जेनेरेटर

मार्स और ग्राहमबेल ने टेलीग्राफ और टेलीफोन के जो आविष्कार किए वे रसायन द्वारा बैटरियों में उत्पादित बिजली की सहायता से किए गए थे। बैट-रियों द्वारा टेलीफोन और टेलीग्राफ के विद्युत चुम्बक काम करने योग्य बन सकते थे, परन्तु उनसे उद्योगों की भारी मशीनें नहीं चल सकती थीं। ऐसी स्थिति में वैज्ञानिकों का ध्यान अधिक मात्रा में बिजली पैदा करने की ओर गया क्योंकि उसके बिना बिजली से अधिक उपयोगी कार्य नहीं किए जा सकते थे।

फैराडे जब १३ वर्ष का था तभी से उसकी बिजली की चीजों में रुचि थी। वह निर्धन परिवार का लड़का था और लण्दन में एक पुस्तकों की दुकान पर काम करता था। वहां उसे पुस्तकें पढ़ने की सुविधा थी। उसे भौतिकी रसायन तथा बिजली के विषय में जो पुस्तकें मिलती, उसे वह बड़े ध्यान से पढ़ता।

एक दिन रायल इंस्टीट्यूट का एक स्कॉलर दुकान पर कोई बिजली सम्बन्धित पुस्तक लेने आया और दुकान के मालिक से हम्फ्रीडेवी के बिजली विषयक दिए गए आश्चर्यजनक व्याख्यानों को चर्चा की। उसके पास हम्फ्री के दूसरे व्याख्यान में जाने का एक अतिरिक्त टिकट था। उसने दुकान के मालिक से उस व्याख्यान में चलने का आग्रह किया, परन्तु उसकी उसमें कोई रुचि न देखकर माइकेल फैराडे को ले जाने को कहा तो माइकेल ने कृतज्ञता से अपने मालिक की ओर देखा।

ग्राहक माइकेल फैराडे को अपने साथ ले गया। सन् १८१२ में माईकेल ने हम्फ्री के तीन व्याख्यान और सुने। उसने जो कुछ सुना उसे सावधानी से लिख लिया। उसने अपने विचार भी लिखे और उन सब कागजों की एक जिल्द-सी बनाली। अब वह इस विषय पर काम करना चाहता था, परन्तु कैसे ? उसके पास साधन ही क्या थे ?

फैराडे ने डेवी को एक पत्र लिखा और अपने एकत्रित नोट तथा उनपर अपने विचारों की एक प्रति उसे भेजी। दिन, सप्ताह, महीने बीते, परन्तु उत्तर न आया। उसे उत्तर की आशा न रही। क्रिसमस से एक दिन पहले उसने देखा दुकान के सामने एक शानदार

गाड़ी खड़ी थी। उससे एक दरबान ने उतर कर उसके नाम का एक पत्र दिया। फैराडे ने तुरन्त पत्र खोल कर पढ़ना आरम्भ किया।

श्री फैराडे,

आपके पत्र से आपकी ध्यान-क्षमता, स्मरणशक्ति और अदम्य उत्साह का परिचय मिलता है। मैं किसी आवश्यक कार्य से बाहर जा रहा हूं और जनवरी के अंत तक लौटूंगा। तब आप जब भी चाहें, मैं आपसे मिलूंगा। मुझे आपके किसी काम गें आने में प्रसन्नता होगी।

आपका आज्ञाकारी विनम्र सेवक,

'हम्फ्री डेवी।'

फैराडे ने वह पत्र कई बार पढ़ा। अब उसकी प्रसन्नता का पारावार न था। डेवी अपने कथन क सच्चा निकला। उसने लौटने पर फैराडे से भेंट व व्यवस्था की, परन्तु इस भेंट का परिणाम निराशाजन रहा। डेवी ने न कोई सुझाव दिया और न ही आश सन दिया।

जेनेरेटर का आविष्कार—फैराडे पुनः अंधकार में डूब गया और निराश होकर लौट आया, परन्तु एक ही मास पश्चात् उसे डेवी का पत्र मिला, जिसमें उसे
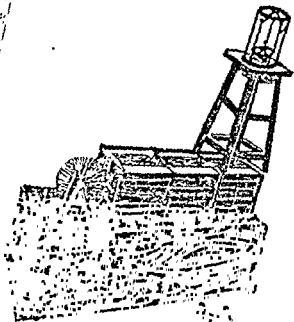
का
जैनरेटर

रायल इंस्टीट्यूट के सहायक के पद पर काम करने का ऑफर था। फैराडे का स्वप्न पूरा हो गया। इससे उसे इंस्टीट्यूट की प्रयोगशाला में काम करने का अवसर मिलेगा। डेवी ने यह कार्य करके विद्युत-विज्ञान-जगत की महान् सेवा की।

फैराडे ने प्रयोगशाला में कार्य आरम्भ किया। उसे वहां की सफाई तथा संदेश ले जाने का काम दिया गया। यहां उसे अध्ययन और परीक्षण करने का समय मिला। उसने ओरस्टड और एम्पीयर के कार्य का विवरण पढ़ा। अन्य वैज्ञानिकों के समान उसका ध्यान चुम्बकत्व पर गया। इस सिद्धान्त के उसने कई परीक्षण किए।

समय के साथ उसकी पदोन्नति हो गई। वह सेवक से इंस्टीट्यूट का सदस्य हो गया, परन्तु तभी दुर्भाग्यवश डेवी का देहान्त हो गया। उस समय फैराडे की आयु ३८ वर्ष थी। उन दिनों वह बिजली बनाने की दिशा में सोच रहा था! १८३१ में उसने एक परीक्षण किया। उसे अपना परीक्षण ठीक लगा और उसने अनुभव किया कि वह ठीक दिशा में काम कर रहा था। उसे अपने कार्य का सूत्र मिल गया था। उसे अब बिजली का एक सम प्रवाह पाने की आशा थी।

उसने एक नाल-चुम्बक लिया और एक बारह इंच व्यास की तांबे की तश्तरी ली और उसे इस तरह स्थापित किया कि घुमाने पर दोनों सिरों से गुज़रे। उसने तार का एक सिरा उस छड़ से जोड़ दिया जिस पर तश्तरी को घूमना था और दूसरा धातु के टुकड़े से जोड़ा। फिर तार से एक मीटर जोड़ दिया गया। यह सब करके उसने क्रैंक को घुमाया। परीक्षण सफल रहा और एक सम धारा प्रवाहित होने लगी। यही विश्व का पहला जेनेरेटर था। वैसे इस विषय में अभी निश्चय नहीं है कि पहला जेनेरेटर फैराडे ने बनाया या हेनरी ने।

हेनरी १८४६ में वाशिंगटन के स्मिथसोनियन संस्थान का मुख्य निर्देशक बना। रेडियो में प्रयुक्त विद्युतीय माप की एक इकाई का नाम 'हेनरी' उसी के नाम पर पड़ा। हेनरी और फैराडे की खोजों के आधार पर जेनेरेटर बना, जिसे डाइनेमो भी कहते हैं। विद्युत-धारा प्रवाहित करने के लिए चुम्बकीय क्षेत्र में हरकत होनी चाहिए, जिससे बल रेखाएं कटें। डाइनेमो का घूमने वाला भाग आर्मेचर कहलाता है, जिसे मशीनी ऊर्जा से चालित किया जाता है।

जो उपकरण एक दिशा धारा से काम करते हैं,

उसे जे० सी० धारा कहते हैं और जो प्रत्यावर्ती धारा से काम करते हैं, उसे ए०सी० कहते हैं। कुछ यंत्र दोनों धाराओं से समान कार्य करते हैं, परन्तु अधिकाशत: केवल एक से ही चालित होते हैं। ए०सी० धारा का उत्पादन सरल है और इसमें खर्च भी कम आता है। इसी लिए अधिकांश बिजलीघरों में ए०सी० बिजली ही बनती है।

बड़े-बड़े बिजलीघर—आज बिजली का उत्पादन प्राय: सभी देशों में होता है। बड़े-बड़े जनित्र-संयत्र स्थापित हो चुके हैं। इनमें बहुत बड़े-बड़े चुम्बक लगे रहते हैं। ये टरबाइनों से चलाए जाते हैं। टरबाइन बड़े पहियो के समान होते हैं। इनमें बड़े-बड़े फलक लगे होते हैं, जो पानी या भाप से टकरा कर पहिए को घुमाते है। टरबाइन आर्मेचर को घुमाते हैं। आर्मेचर के विद्युतीय-चुम्बक के क्षेत्र में घूमने से बिजली पैदा होती है, जिसे तारों द्वारा विविध कारखानों में भेजा जाता है और उससे कारखाने चलते हैं तथा प्रकाश की व्यवस्था होती है।

भारत में बहुत से बिजली-घर जल प्रपातों के निकट स्थापित किए गए हैं। उनमें पानी की शक्ति का प्रयोग उपयोग जनित्र संयत्रों को चलाने के लिए

किया जाता है। नियाग्रा प्रपात से बिजली बनाने का बहुत बड़ा संयत्र चालित होता है। जनित्र-संयत्रों को चलाने के लिए भारत में अनेकों डेम बना कर पानी की शक्ति को बिजली बनाने के काम में लाया गया है। जिस जगह पानी की शक्ति का जुटा पाना सम्भव नहीं है वहां भाप से टरबाइनों को चलाया जाता है। कोयला, तेल और गैस भाप पैदा करके उससे काम लिया जाता है।

बिजली-घर स्थापित करने के लिए वैज्ञानिक नए-नए ऊर्जा स्रोतों की खोज कर रहे हैं। परमाणु ऊर्जा का भी उपयोग अब बिजलीघरों को स्थापित करने के लिए किया जा रहा है। सम्भव है निकट भविष्य में सूर्य ऊर्जा को इसके लिए प्रयोग किया जाने लगे। हेनरी और फैराडे की खोजों ने विश्व को ऊर्जा का जो यह साधन प्रदान किया है वह आज के विश्व में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

बिजली का ट्रांसफार्मेशन—बिजली उत्पादन से एक समस्या हल हुई कि शक्ति का एक बहुत बड़ा स्रोत उपलब्ध हुआ। अब इस स्रोत को प्रयोग में कैसे लाया जाय इस पर विचार करना था। इसमें पहला काम उत्पादित बिजली को नापना था और

फ़िर यह निर्धारित करना था कि उसे किस अनुपात में किस कार्य के लिए वितरित किया जाए।

विद्युत को उत्पादन के पश्चात वोल्टता घर में भेजा जाता है। किसी काम में प्रयोगार्थ भेजने से पहले उसे उचित वोल्टता पर लाना होता है। यह कार्य ट्रांसफार्मर करता है। यह वोल्टों को घटा-बढ़ा सकता है। वोल्टों की संख्या बढ़ाने वाले को उपक्रमा ट्रांसफार्मर तथा कम करने वाले को अपक्रम ट्रांसफार्मर कहते हैं। यह वोल्टों को बदलने की प्रक्रिया केवल प्रत्यावर्ती धारा में ही सम्भव है।

बिजली का प्रवाह—जिस प्रकार तेल या पानी पाइप लाइनों द्वारा स्थानांतरित किया जाता है उसी प्रकार बिजली को तारों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जाता है। बिजली के दबाव को मापने वाली एक इकाई को एलेस्सांद्रो वोल्टा कहते हैं और प्रवाहित होने वाले इलेक्ट्रानों की संख्या की इकाई को ऐड़े एम्पीयर कहा जाता है। बिजली द्वारा किया गया काम वाटों में मापा जाता है। जैसे आप जिन बल्वों का प्रकाश के लिए प्रयोग करते हैं वे बत्तियां विभिन्न वाटों की होती हैं। खर्च की गई बिजली को मापने की इकाई किलोवाट है। एक किलोवाट में १०००

वाट होते हैं ।

विद्युत मोटर—बिजली से काम लेने के लिए बिजली की मोटरें बनाई गईं । ये मोटरें बिजली के विविध उपकरणों को चालित करती हैं । ये मोटरें अलग-अलग पावर की होती हैं । बड़ी मशीनो पर बड़ी मोटरें तथा छोटी मशीनों पर छोटी मोटरें लगाई जाती हैं । इनसे छोटे-बड़े सभी उद्योगों में काम लिया जाता है । ये मोटरें एक ही सिद्धान्त के अनुसार कार्य करती हैं । ये उल्टी दिशा में काम करने वाले जनित्र हैं। मोटर का काम वाट से बिजली ऊर्जा प्राप्त कर उसे मशीनी ऊर्जा में बदलना होता है । इन मोटरो में भी जनित्र के समान आर्मेचर होता है । यही आर्मेचर मोटर की धुरी को घुमाता है । इस धुरी का सम्बन्ध मशीन की शाफ्ट पर लगी पुली से होता है, जो उसे घुमा देती है ।

इस प्रकार हमने देखा बिजली हमारे घरेलू प्रकाश तथा अन्य कामों के अतिरिक्त छोटे तथा बड़े उद्योग धधों को चालित करती है । आजकल बिजली के ५०-५० हजार अश्व-शक्ति के मोटर बनाए जा चुके है ।

विद्युत और प्रकाश

बिजली के प्रवाह में वैज्ञानिकों ने चमक अनुभव की तो उसका ध्यान इस ओर गया कि बिजली से प्रकाश प्राप्त किया जाना सम्भव है। इस दिशा में टॉमस एडीसन, जिन्हें विश्व के महानतम आविष्कारकों में स्थान प्राप्त है का ध्यान गया। एडीसन का जन्म सन् १८४७ में हुआ था। उनके पिता मिस्तरी का काम करते थे। उन्हें पारिवारिक निर्धनता के कारण स्कूली शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा प्राप्त नहीं हुई। उन्हें उनकी माता ने पढ़ाया, जो कभी स्कूल अध्यापिका रह चुकी थीं।

जब एडिसन १२ वर्ष का था। तो उसने पारिवारिक अर्थव्यवस्था को संतुलित करने के लिए नौकरी कर ली। उसे डेट्रायल और मिशिगन के पोर्ट हुरोन नगर के बीच ग्रांड ट्रंक रेल रोड पर सेवक का काम मिला। उसके कार्य ने मालिक तथा यात्री दोनों को

टेलीफोन का आविष्कार—वैज्ञानिकों ने टेलीग्राफ को एक विशेष उपलब्धि तो अवश्य माना, परन्तु इससे उन्हें संतुष्टि न हो पाई। वे चाहते थे कि बिजली द्वारा ध्वनि को दूर तक भेजा जा सके।

इसी समय ग्राहमबेल नामक एक युवक ऐसा यंत्र बनाने में संलग्न था। जिसके द्वारा वह मनुष्य की आवाज को तारों के जरिए दूर भेज सके। ग्राहमबेल का जन्म स्काटलैण्ड में हुआ था और वहां से कनाडा चला आया था। फिर वह बोस्टन आकर बहरे बच्चों का अध्यापन कार्य करने लगा।

इसकी रुचि ऐसे यंत्र का निर्माण करने में थी, जिसके द्वारा मनुष्य की आवाज भेजी और ग्रहण की जा सके। उसने अपनी एक प्रयोगशाला बनाई और उसमें कार्य आरम्भ किया। उसके साथ उसका साथी वाटसन भी इसी कार्य में जुटा था। ग्राहमबेल टेलीग्राफ के आविष्कार से यह निष्कर्ष निकाल चुका था कि बिजली द्वारा ध्वनि की तरंगें एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंच जाती हैं। वह सोचता था कि जब ध्वनि जा सकती है तो मानव-आवाज क्यों नहीं जा सकती?

ग्राहमबेल ने अपने अनथक परिश्रम के द्वारा

वाटसन के साथ मिलकर 'विद्युत वाणी मशीन' बनाने में लग गया। उसने सैंकड़ों बार प्रयोग किया परन्तु सफलता न मिली। ऐसी दशा में उसे अपने यंत्रों मे परिवर्तन करना पड़ा। सन् १८७६ की १० मार्च को वह अपने यंत्र पर बैठा था। दोनों दो कमरों में थे और बीच का दरवाजा बन्द था। ग्राहमबेल ने पास में रखी कोई चीज उठाने को हाथ बढ़ाया तो बैटरी गिर गई। उसके मुख से निकला, 'वाटसन इधर आओ तो जरा।' बीच का दरवाजा बन्द होने पर भी संग्राही यंत्र पर वाटसन ने बेल के ये शब्द सुने और वह खुशी से उछल पड़ा। वह दौड़ा हुआ बेल के पास आकर बोला, "हमारा परीक्षण सफल हो गया।"

यह टेलीफोन द्वारा सुनी गई पहली आवाज थी। बेल आश्चर्य चकित रह गया था। वह अपने कपड़ों पर गिरे बैटरी के अम्ल को भूल ही गया, जिसके लिए उसने वाटसन को पुकारा था। फिर वे आधे घंटे तक परस्पर टेलीफोन पर बातें करते रहे। एक बोलता, दूसरा सुनता, दूसरा बोलता, पहला सुनता। यंत्र ठीक काम कर रहा था। अब उन्हें इसमें कोई संदेह न रहा कि उनके उस यंत्र द्वारा मनुष्य की आवाज को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जा सकता है।

सन् १८७६ में ही फिलाडिलफिया में अमरीकी स्वाधीनता की १०० वीं वर्षगांठ मनाई गई। वहीं पर एक नुमाइश में ग्राहमबेल अपने टेलीफोन को प्रदर्शन के लिए ले गया। पुरस्कार रविवार को दिए जाने थे। बड़ी गर्मी थी उस दिन। आमंत्रित व्यक्ति निर्णायकों के साथ थे। निर्णायकों में ब्राजील का सम्राट डॉन पेड्रो भी अपनी पत्नी के साथ था। सब थक गए थे और गर्मी से त्रस्त थे। ग्राहमबेल को पता चला कि शायद निर्णायक उस दिन सब चीजें न देख पाएं। वह दुखी होकर हॉल से बाहर जाने लगा कि तभी उसके कानों में किसी की पुकार आई। वह पुकार सम्राट डॉन पैड्रो की थी।

ग्राहमबेल की जान-में-जान आई। वह वापस अपने यन्त्र के पास लौट गया। डॉन पैड्रो उसका पूर्व परिचित था। यह बोस्टन में एक बार उसके स्कूल में आया था और उसने बहरे बच्चों के विषय में देर तक बातें की थीं। उसने ग्राहमबेल से उसके यंत्र का प्रदर्शन करने को कहा और बेल अपने कार्य पर लग गया। उसके यंत्र का चमत्कार देखकर निर्णायक आश्चर्य-चकित रह गए। उन्होंने एक-एक करके यंत्र द्वारा बातें कीं और सुनीं। सब लोगों ने प्रसन्न होकर

ग्राहमवेल के टेलीफोन को सर्वप्रथम पुरस्कार देने की घोषणा की।

ग्राहमवेल की यह मशीन परिष्कृत नहीं थी और उसमें जोर से बोलने पर ही बात स्पष्ट सुनाई देती थी, परन्तु वह एक क्रांतिकारी आविष्कार था। आज हम टेलीफोन का जो रूप देखते हैं इसमें और उसमें काफी अन्तर था। अब हम डायल घुमाते हैं और संयोजन स्वयं हो जाता है। हम देश-विदेश के विभिन्न नगरों में बैठे अपने आदमियों से उसी प्रकार बातें कर लेते हैं जैसे पास में बैठे व्यक्ति से कर सकते हैं। हम टेलीफोन की आवाज से बोलने वाले व्यक्ति को पहचान लेते हैं। यह बात ग्राहमवेल के टेलीफोन में नहीं थी, परन्तु वर्तमान टेलीफोन और ग्राहम के टेलीफोन के आधारभूत सिद्धान्तों में कहीं कोई भेद नहीं है।

ग्राहमवेल ने टेलीफोन का आविष्कार कर विद्युत-शक्ति द्वारा एक ऐसी चमत्कारिक चीज मानव-जाति को प्रदान की, जो आज प्रशासन, उद्योग और व्यापार के क्षेत्र में अनिवार्य बन गई है। इस आविष्कार ने इन सभी क्षेत्रों में होने वाले कार्यों को गति प्रदान की है और अनावश्यक यातायात को कम कर दिया है। जिन कामों के लिए पहले स्वयं जाए बिना काम हो

ही नहीं सकता था, वे घर बैठे फोन पर हो जाते हैं। यह यंत्र डाक्टरों, वकीलों, इंजीनियरों, प्रशासकों, व्यवस्थापकों, पुलिस, सेना इत्यादि के लिए वरदान सिद्ध हुआ है। आज नगरों में शायद ही ऐसा कोई सभ्य तथा सुशिक्षित घर होगा जहां टैलीफोन की व्यवस्था न हो।

संदेशवाहक के रूप में टैलीग्राफ को टैलीफोन ने बहुत पीछे छोड़ दिया है।

बिजली के जेनेरेटर

मार्स और ग्राहमवेल ने टेलीग्राफ और टेलीफोन के जो आविष्कार किए वे रसायन द्वारा बैटरियों में उत्पादित बिजली की सहायता से किए गए थे। बैटरियों द्वारा टेलीफोन और टेलीग्राफ के विद्युत चुम्बक काम करने योग्य बन सकते थे, परन्तु उनसे उद्योगों की भारी मशीनें नहीं चल सकती थीं। ऐसी स्थिति में वैज्ञानिकों का ध्यान अधिक मात्रा में बिजली पैदा करने की ओर गया क्योंकि उसके बिना बिजली से अधिक उपयोगी कार्य नहीं किए जा सकते थे।

फैराडे जब १३ वर्ष का था तभी से उसकी बिजली की चीजों में रुचि थी। वह निर्धन परिवार का लड़का था और लण्दन में एक पुस्तकों की दुकान पर काम करता था। वहां उसे पुस्तकें पढ़ने की सुविधा थी। भौतिकी रसायन तथा बिजली के विषय में जो मिलती, उसे वह बड़े ध्यान से पढ़ता।

एक दिन रायल इंस्टीट्यूट का एक स्कॉलर दुकान पर कोई बिजली सम्बन्धित पुस्तक लेने आया और दुकान के मालिक से हम्फीडेवी के बिजली विषयक दिए गए आश्चर्यजनक व्याख्यानों की चर्चा की। उसके पास हम्फी के दूसरे व्याख्यान में जाने का एक अतिरिक्त टिकट था। उसने दुकान के मालिक से उस व्याख्यान में चलने का आग्रह किया, परन्तु उसकी उसमें कोई रुचि न देखकर माइकेल फैराडे को ले जाने को कहा तो माइकेल ने कृतज्ञता से अपने मालिक की ओर देखा।

ग्राहक माइकेल फैराडे को अपने साथ ले गया। सन् १८१२ में माईकेल ने हम्फी के तीन व्याख्यान और सुने। उसने जो कुछ सुना उसे सावधानी से लिख लिया। उसने अपने विचार भी लिखे और उन सब कागजों को एक जिल्द-सी बनाली। अब वह इस विषय पर काम करना चाहता था, परन्तु कैसे? उसके पास साधन ही क्या थे?

फैराडे ने डेवी को एक पत्र लिखा और अपने एकत्रित नोट तथा उनपर अपने विचारों की एक प्रति उसे भेजी। दिन, सप्ताह, महीने बीते, परन्तु उत्तर न आया। उसे उत्तर की आशा न रही। क्रिसमस से एक दिन पहले उसने देखा दुकान के सामने एक शानदार

गाड़ी खड़ी थी। उससे एक दरवान ने उतर कर उसके नाम का एक पत्र दिया। फैराडे ने तुरन्त पत्र खोल कर पढ़ना आरम्भ किया।

श्री फैराडे,

आपके पत्र से आपकी ध्यान-क्षमता, स्मरणशक्ति और अदम्य उत्साह का परिचय मिलता है। मैं किसी आवश्यक कार्य से बाहर जा रहा हूं और जनवरी के अंत तक लौटूंगा। तब आप जब भी चाहें, मैं आपसे मिलूंगा। मुझे आपके किसी काम में आने में प्रसन्नता होगी।

आपका आज्ञाकारी विनम्र सेवक,

'हम्फ्री डेवी।'

फैराडे ने वह पत्र कई बार पढ़ा। अब उसकी प्रसन्नता का पारावार न था। डेवी अपने कथन का सच्चा निकला। उसने लौटने पर फैराडे से भेंट की व्यवस्था की, परन्तु इस भेंट का परिणाम निराशाजनव रहा। डेवी ने न कोई सुझाव दिया और न ही आश्वा सन दिया।

जेनेरेटर का आविष्कार—फैराडे पुनः अंधकार डूब गया और निराश होकर लौट आया, परन्तु ही मास पश्चात् उसे डेवी का पत्र मिला, जिसमें
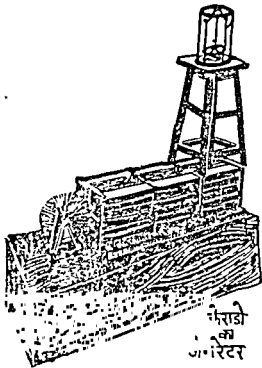
फैराडो का जनरेटर

रायल इंस्टीट्यूट के सहायक के पद पर काम करने का ऑफर था। फैराडे का स्वप्न पूरा हो गया। इससे उसे इंस्टीट्यूट की प्रयोगशाला में काम करने का अवसर मिलेगा। डेवी ने यह कार्य करके विद्युत-विज्ञान-जगत की महान् सेवा की।

फैराडे ने प्रयोगशाला में कार्य आरम्भ किया। उसे वहां की सफाई तथा संदेश ले जाने का काम दिया गया। यहां उसे अध्ययन और परीक्षण करने का समय मिला। उसने ओरस्टड और एम्पीयर के कार्य का विवरण पढ़ा। अन्य वैज्ञानिकों के समान उसका ध्यान चुम्बकत्व पर गया। इस सिद्धान्त के उसने कई परीक्षण किए।

समय के साथ उसकी पदोन्नति हो गई। यह सेवक से इंस्टीट्यूट का सदस्य हो गया, परन्तु तभी दुर्भाग्यवश डेवी का देहान्त हो गया। उस समय फैराडे की आयु ३८ वर्ष थी। उन दिनों वह बिजली बनाने की दिशा में सोच रहा था! १८३१ में उसने एक परीक्षण किया। उसे अपना परीक्षण ठीक लगा और उसने अनुभव किया कि वह ठीक दिशा में काम कर रहा था। उसे अपने कार्य का सूत्र मिल गया था। उसे अब बिजली का एक सम प्रवाह पाने की आशा थी।

उसने एक नाल-चुम्बक लिया और एक बारह इंच व्यास की तांबे की तश्तरी ली और उसे इस तरह स्थापित किया कि घुमाने पर दोनों सिरों से गुजरे। उसने तार का एक सिरा उस छड़ से जोड़ दिया जिस पर तश्तरी को घूमना था और दूसरा धातु के टुकड़े से जोड़ा। फिर तार से एक मीटर जोड़ दिया गया। यह सब करके उसने क्रैंक को घुमाया। परीक्षण सफल रहा और एक सम धारा प्रवाहित होने लगी। यही विश्व का पहला जेनेरेटर था। वैसे इस विषय में अभी निश्चय नहीं है कि पहला जेनेरेटर फैराडे ने बनाया या हेनरी ने।

हेनरी १८४६ में वाशिंगटन के स्मिथसोनियन संस्थान का मुख्य निर्देशक बना। रेडियो में प्रयुक्त विद्युतीय माप की एक इकाई का नाम 'हेनरी' उसी के नाम पर पड़ा। हेनरी और फैराडे की खोजों के आधार पर जेनेरेटर बना, जिसे डाइनेमो भी कहते है। विद्युत-धारा प्रवाहित करने के लिए चुम्बकीय क्षेत्र में हरकत होनी चाहिए, जिससे बल रेखाएं कटें। डाइनेमो का घूमने वाला भाग आर्मेचर कहलाता है, जिसे मशीनी ऊर्जा से चालित किया जाता है।

जो उपकरण एक दिश धारा से काम करते हैं,

उसे डी० सी० धारा कहते हैं और जो प्रत्यावर्ती धारा से काम करते हैं, उसे ए०सी० कहते हैं। कुछ यंत्र दोनों धाराओं से समान कार्य करते हैं, परन्तु अधिकाशतः केवल एक से ही चालित होते हैं। ए०सी० धारा का उत्पादन सरल है और इसमें खर्च भी कम आता है। इसी लिए अधिकांश बिजलीघरों में ए०सी० बिजली ही बनती है।

बड़े-बड़े बिजलीघर—आज बिजली का उत्पादन प्रायः सभी देशों में होता है। बड़े-बड़े जनित्र-संयत्र स्थापित हो चुके हैं। इनमें बहुत बड़े-बड़े चुम्बक लगे रहते हैं। ये टरबाइनों से चलाए जाते हैं। टरबाइन बड़े पहियों के समान होते हैं। इनमें बड़े-बड़े फलक लगे होते हैं, जो पानी या भाप से टकरा कर पहिए को घुमाते हैं। टरबाइन आर्मेचर को घुमाते हैं। आर्मेचर के विद्युतीय-चुम्बक के क्षेत्र में घूमने से बिजली पैदा होती है, जिसे तारों द्वारा विविध कारखानों में भेजा जाता है और उससे कारखाने चलते हैं तथा प्रकाश की व्यवस्था होती है।

भारत में बहुत से बिजली-घर जल प्रपातों के निकट स्थापित किए गए हैं। उनमें पानी की शक्ति का प्रयोग उपयोग जनित्र संयत्रो को चलाने के लिए

किया जाता है । नियाग्रा प्रपात से बिजली बनाने का बहुत बड़ा संयत्र चालित होता है । जनित्र-संयत्रों को चलाने के लिए भारत में अनेकों डेम बना कर पानी की शक्ति को बिजली बनाने के काम में लाया गया है। जिस जगह पानी की शक्ति का जुटा पाना सम्भव नहीं है वहां भाप से टरबाइनों को चलाया जाता है । कोयला, तेल और गैस भाप पैदा करके उससे काम लिया जाता है ।

बिजली-घर स्थापित करने के लिए वैज्ञानिक नए-नए ऊर्जा स्रोतों की खोज कर रहे हैं। परमाणु ऊर्जा का भी उपयोग अब बिजलीघरों को स्थापित करने के लिए किया जा रहा है । सम्भव है निकट भविष्य में सूर्य ऊर्जा को इसके लिए प्रयोग किया जाने लगे । हेनरी और फैराडे की खोजों ने विश्व को ऊर्जा का जो यह साधन प्रदान किया है वह आज के विश्व में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

बिजली का ट्रांसफार्मेशन—बिजली उत्पादन से एक समस्या हल हुई कि शक्ति का एक बहुत बड़ा स्रोत उपलब्ध हुआ । अब इस स्रोत को प्रयोग में कैसे लाया जाय इस पर विचार करना था । इसमें पहला काम उत्पादित बिजली को नापना था और

उसे डी० सी० धारा कहते हैं और जो प्रत्यावर्ती धारा से काम करते हैं, उसे ए०सी० कहते हैं। कुछ यंत्र दोनों धाराओं से समान कार्य करते हैं, परन्तु अधिकाशतः केवल एक से ही चालित होते हैं। ए०सी० धारा का उत्पादन सरल है और इसमें खर्च भी कम आता है। इसी लिए अधिकांश बिजलीघरों में ए०सी० बिजली ही बनती है।

बड़े-बड़े बिजलीघर—आज बिजली का उत्पादन प्रायः सभी देशों में होता है। बड़े-बड़े जनित्र-संयंत्र स्थापित हो चुके हैं। इनमें बहुत बड़े-बड़े चुम्बक लगे रहते हैं। ये टरबाइनों से चलाए जाते हैं। टरबाइन बड़े पहियों के समान होते हैं। इनमें बड़े-बड़े फलक लगे होते हैं, जो पानी या भाप से टकरा कर पहिए को घुमाते हैं। टरबाइन आ[illegible] को घुमाते हैं। आर्मेचर के विद्युतीय-[illegible] से [illegible]
पैदा होती है, जिसे [illegible]
भेजा जाता है और [illegible]
प्रकाश की [illegible]

भारत में [illegible]
निकट [illegible]
का [illegible]

वाट होते हैं।

विद्युत मोटर—बिजली से काम लेने के लिए बिजली की मोटरें बनाई गईं। ये मोटरें बिजली के विविध उपकरणों को चालित करती हैं। ये मोटरें अलग-अलग पावर की होती हैं। बड़ी मशीनों पर बड़ी मोटरें तथा छोटी मशीनों पर छोटी मोटरें लगाई जाती हैं। इनसे छोटे-बड़े सभी उद्योगों में काम लिया जाता है। ये मोटरें एक ही सिद्धान्त के अनुसार कार्य करती हैं। ये उल्टी दिशा में काम करने वाले जनित्र हैं। मोटर का काम वाट से बिजली ऊर्जा प्राप्त कर उसे मशीनी ऊर्जा में बदलना होता है। इन मोटरों में भी जनित्र के समान आर्मेचर होता है। यही आर्मेचर मोटर की धुरी को घुमाता है। इस धुरी का सम्बन्ध मशीन की शाफ्ट पर लगी पुली से होता है, जो उसे घुमा देती है।

इस प्रकार हमने देखा बिजलो हमारे घरेलू प्रकाश तथा अन्य कामों के अतिरिक्त छोटे तथा बड़े उद्योग धंधों को चालित करती है। आजकल बिजलो के ५०-५० हजार अश्व-शक्ति के मोटर बनाए जा चुके हैं।

फिर यह निर्धारित करना था कि उसे किस अनुपात में किस कार्य के लिए वितरित किया जाए।

विद्युत को उत्पादन के पश्चात वोल्टता घर में भेजा जाता है। किसी काम में प्रयोगार्थ भेजने से पहले उसे उचित वोल्टता पर लाना होता है। यह कार्य ट्रांसफार्मर करता है। यह वोल्टों को घटा-बढ़ा सकता है। वोल्टों की संख्या बढ़ाने वाले को उपक्रमा ट्रांसफार्मर तथा कम करने वाले को अपक्रम ट्रांसफार्मर कहते हैं। यह वोल्टों को बदलने की प्रक्रिया केवल प्रत्यावर्ती धारा में ही सम्भव है।

बिजली का प्रवाह—जिस प्रकार तेल या पानी पाइप लाइनों द्वारा स्थानांतरित किया जाता है उसी प्रकार बिजली को तारों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जाता है। बिजली के दबाव को मापने वाली एक इकाई को एलेस्सांद्रो वोल्टा कहते हैं और प्रवाहित होने वाले इलेक्ट्रानों की संख्या की इकाई को ऐंड्रे एम्पीयर कहा जाता है। बिजली द्वारा किया गया काम वाटों में मापा जाता है। जैसे आप जिन बल्बों का प्रकाश के लिए प्रयोग करते हैं वे बत्तियां विभिन्न वाटों की होती हैं। खर्च की गई बिजली को मापने की इकाई किलोवाट है। एक किलोवाट में १०००

वाट होते हैं ।

विद्युत मोटर—बिजली से काम लेने के बिजली की मोटरें बनाई गईं। ये मोटरें बिजली के विविध उपकरणों को चालित करती हैं। ये मोटरें अलग-अलग पावर की होती हैं। बड़ी मशीनो पर बड़ी मोटरें तथा छोटी मशीनों पर छोटी मोटरें लगाई जाती हैं। इनसे छोटे-बड़े सभी उद्योगों में काम लिया जाता है। ये मोटरें एक ही सिद्धान्त के अनुसार कार्य करती हैं। ये उल्टी दिशा में काम करने वाले जनित्र हैं। मोटर का काम वाट से बिजली ऊर्जा प्राप्त कर उसे मशीनी ऊर्जा में बदलना होता है। इन मोटरों में भी जनित्र के समान आर्मेचर होता है। यही आर्मेचर मोटर की धुरी को घुमाता है। इस धुरी का सम्बन्ध मशीन की शाफ्ट पर लगी पुली से होता है, जो उसे घुमा देती है।

इस प्रकार हमने देखा बिजली हमारे घरेलू प्रकाश तथा अन्य कामों के अतिरिक्त छोटे तथा बड़े उद्योग धंधों को चालित करती है। आजकल बिजली के ५०-५० हजार अश्व-शक्ति के मोटर बनाए जा चुके हैं।

विद्युत और प्रकाश

बिजली के प्रवाह में वैज्ञानिकों ने चमक अनुभव की तो उसका ध्यान इस ओर गया कि बिजली से प्रकाश प्राप्त किया जाना सम्भव है। इस दिशा में टॉमस एडीसन, जिन्हें विश्व के महानतम आविष्कारकों में स्थान प्राप्त है का ध्यान गया। एडीसन का जन्म सन् १८४७ में हुआ था। उनके पिता मिस्तरी का काम करते थे। उन्हें पारिवारिक निर्धनता के कारण स्कूली शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा प्राप्त नहीं हुई। उन्हें उनकी माता ने पढ़ाया, जो कभी स्कूल अध्यापिका रह चुकी थीं।

जब एडिसन १२ वर्ष का था। तो उसने पारिवारिक अर्थव्यवस्था को संतुलित करने के लिए नौकरी कर ली। उसे डेट्रायल और मिशिगन के पोर्ट हुरोन नगर के बीच ग्रांड ट्रंक रेल रोड पर सेवक का काम मिला। उसके कार्य ने मालिक तथा यात्री दोनों को